योगवाणी

महाकुम्भ विशेषाङ्क

वर्ष ५०, फरवरी २०२५

योगवाणी
वर्ष ५०, फरवरी, २०२५

आर.एन.आई. २९०७५/७६

"मानव जीवन में योग की साधना की परम उपयोगिता सहज सिद्ध है। योग ही एक ऐसा निरपेक्ष साधन मार्ग है जिसके आश्रय में सर्व सामान्य को जीवन की व्यवहारिकता और सच्चिदानन्द स्वरूप का ज्ञान सुलभ होता है"

राष्ट्रसन्त महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज

वार्षिक सदस्यता : १२५/-
द्विवार्षिक सदस्यता : १५०/-
पंचवार्षिक सदस्यता : ६००/-
आजीवन सदस्यता : १२००/-
एक प्रति का मूल्य : १५/-

मुद्रक:
मोती पेपर कनवर्टर्स
डी-4/1, सेक्टर 13
गीडा, गोरखपुर
दूरभाष : 0551-2580093

विषयानुक्रम

	पृष्ठ
जीवनामृत	
श्रीशिवगोरक्षस्तुतिः	०२
योगामृत	०३
गोरखवाणी	०४
राशियों का मासफल	०५
महाकुम्भविशेष	
भारतीय ज्ञान परम्परा में कुम्भ पर्व का ज्योतिषीय दृष्टिकोण -प्रो. परमानन्द भारद्वाज	०७
धार्मिक दृष्टि से कुम्भपर्व का महत्व -प्रो. शैलेश कुमार तिवारी	१६
महाकुम्भ स्नान की वैज्ञानिकता - डॉ. विपिन कुमार झा	२६
लोक आस्था और महाकुम्भ -डॉ. सलिल कुमार पाण्डेय	३६
विविधता में एकता का प्रतीक है महाकुम्भ - डॉ. अभिषेक कुमार उपाध्याय	३८
समुद्र मन्थन व मनुष्य जीवन -आचार्य नवनीत	४५
तीर्थराज प्रयाग का माहात्म्य -आचार्य आदित्य मिश्र	४९
जीवन में धर्म की अनिवार्यता - डॉ. अवनीन्द्र कुमार पाण्डेय	५०
भक्तकवि जयदेव कृत दशावतार वन्दना - एक नारायण पौडेल	५२
चतुर्थ आवरण	
सिंघाडा एक औषधि है- श्रीसुरेन्द्र कुमार "महाचन्द्र"	

॥ ॐ नमो भगवते गोरक्षनाथाय ॥

योगवाणी

(धर्म-संस्कृति, अध्यात्म एवं योग प्रधान पत्रिका)

संस्थापक-सम्पादक

राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेद्यनाथ

प्रधान सम्पादक

गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ

प्रबन्ध सम्पादक

डॉ. प्रदीप कुमार राव

सम्पादक

डॉ. प्रांगेश कुमार मिश्र

प्रकाशक

श्री गोरखनाथ मन्दिर

गोरखपुर - २७३०१५

web: www.gorakhnathmandir.in

E-mail: gorakhnathmandir@yahoo.com

दूरभाष : (०५५१) २२५५४५३, २२५५४५४

श्रीशिवगोरक्षस्तुतिः

नित्याय नाथाय निरञ्जनाय,
निवातनिष्कम्प-शिखोपमाय ।
ज्योतिः स्वरूपाय नभोनिभाय,
गोरक्षनाथाय नमः शिवाय ॥१॥

मत्स्येन्द्र-शिष्याय महेश्वराय,
योग-प्रचाराय वपुर्धराय ।
अयोनिजायामरविग्रहाय,
गोरक्षनाथाय नमः शिवाय ॥२॥

शुद्धाय बुद्धाय विमुक्तकाय,
शान्ताय दान्ताय निरामयाय ।
सिद्धेश्वरायारिवलसंश्रयाय
गोरक्षनाथाय नमः शिवाय ॥३॥

कर्पूरगौराय जटाधराय,
कर्णान्त-विश्रान्त-विलोचनाय ।
त्रिशूलिने भूति-विभूषिताय
गोरक्षनाथाय नमः शिवाय ॥४॥

अनाथ-नाथाय जगद्धिताय,
कृपा-कटाक्षोधृत-कण्टकाय ।
आपामरं योग-सुधा-प्रदाय,
गोरक्षनाथाय नमः शिवाय ॥५॥

इति श्रीकुँवरनरेन्द्रप्रतापसिंहकृतं शिवगोरक्षपञ्चकं समाप्तम्।

■

योगामृत

गोरक्ष उवाच :-

ॐ गुरुजी ! कथमुत्पद्यते नादः ? कथं नादः समो भवेत्।
कथं संस्थाप्यते नादः ? कथं नादो विलीयते ॥ ३१॥

भावार्थ– हे गुरु ! शब्द की उत्पत्ति कहां होती है और शब्द समभाव कहां स्थापन एवं कहां विलय होता है?

मत्स्येन्द्र उवाच :-

अवधू ! ॐकारादुत्थितो नादः शून्ये नादः समो भवेत्।
पवने स्थाप्यते नादो, नादो ब्रह्मणि लीयते ॥ ३२॥

भावार्थ– हे शिष्य ! ओंकार बीज मन्त्र से शब्द की उत्पत्ति, शून्याकाश में नाद की समता पवन (वायु) के संग से शब्द (ध्वनि) की स्थिरता और निरंजन (महाकाश–गगन) ऐक्यता में शब्द का विलय हो जाता है।

गोरक्ष उवाच :-

ॐ गुरुजी ! नादेन नादिवा विन्देन विन्दिवा, गगने न लाइवा आसा।
नाद बिंदु जब दोउ न होयगा, तब प्राण पुरुष का कहां होइगा वासा ?॥३३॥

भावार्थ– भावार्थ–हे गुरु ! सृष्टि के आरम्भ व अन्त में नाद तथा शब्दाकाश बिन्दु तथा वीर्य–प्रजनन शक्ति नहीं थी। शून्याकाश का आशाद्वार और नाद बिंदु दोनों के अभाव में प्राण वायु का निवास कहां होगा।

मत्स्येन्द्र उवाच :-

अवधू! नादे भी नादिवा विन्दे भी विन्दिवा गगने भी लाइवा आसा।
नाद विंद जब दोउ न होइगा, तब प्राण पुरुष का निरंतर होइगा वासा ॥३४॥

भावार्थ– हे अवधू ! शब्द, शब्दाकाश, बिन्दु–प्रजनन शक्ति, शून्याकाश–आशाद्वार (नाद बिंदु) रहित सृष्टि में अणु–परमाणु वाद सिद्धान्तानुसार प्राण–चैतन्य शक्ति का महाकाश भूम में निवास होगा।

(योगी सम्प्रदाय नित्यकर्म संचय पृ.सं. ६३–६४)

■

गोरखवाणी

सत्यो सीलं दोय असनांन त्रितीये गुर बायक।
चत्रथे षीषा असनान पंचमे दया असनान।
ये पंच असनान निरमला नितिप्रति करत गोरखवाला ॥ २५८ ॥

बालयति (योगी) गोरखनाथ का वचन है कि मैं पाँच प्रकार के स्नान नित्य करता हूँ। ये सत्य, शील, गुरुपदेश-चिंतन, स्वाध्याय (षीषा, सीषा-शिक्षा) और दया हैं। इनको आचरण में उतारने से तन, मन, बुद्धि सबकी शुद्धि हो जाती है। इन पाँच स्नानों से योगी का जीवन सदा संयमित और पुण्यशाली होता है। इस बही में इस बात पर बल दिया गया है कि वस्तुतः चित्त का परिष्कार ही वास्तविक स्नान है।

त्रियाजीत ते पुरिषा गता मिलि भानंत ते पुरिषा गता।
बिसासघातगी पुरिषा गता कायरौ तत ते पुरिषा गता ॥ २५९ ॥

अभष भषंते पुरिषा गता । सबद हीण ते पुरिषा गता।
उदिक राषंत ते पुरिषा गता। परत्रिया राचंत ते पुरिष गता ॥
सति सति भाषत गोरष बाला इतना त्यागि रहो निराला ॥ २६० ॥

जो पुरुष स्त्री द्वारा जीत लिया जाता है (स्त्री के वश में हो जाता है) वह नष्ट (गत) हो जाता है। जो पुरुष एक दूसरे से अपना (सहृदयतापूर्ण) संबंध तोड़ लेता है, वैरभाव को अपना लेता है, वह नष्ट हो जाता है। जो विश्वासघाती होता है, वह नष्ट हो जाता है। जो पुरुष कायर है, अपने कर्तव्य से विमुख रहता है, उसका जीवन व्यर्थ है। जो युक्ताहार से विमुख होकर अभक्ष्य तामसिक पदार्थों का भोजन के रूप में उपयोग करता है, वह नष्ट हो जाता है। जो अपने गुरु के उपदेश के अनुसार जीवन और आचार-विचार नहीं बनाता और पथभ्रष्ट होकर अपकर्म में लग जाता है, उसका भी अस्तित्व व्यर्थ है। वह किसी काम का नहीं रह जाता। इसी तरह जो पुरुष कामोपभोगसुख में आसक्त होकर वीर्य का स्त्री के संभोग में क्षरण करता है, वीर्य रस को शरीर में पचा नहीं लेता, उसे भी नष्ट ही समझना चाहिए। जो परस्त्री पर कुदृष्टि रखता है, वह पतित है, उसे भी नष्ट ही जानना चाहिए। गुरु गोरक्षनाथ सत्य कहते हैं कि उपर्युक्त पुरुषों का त्याग करके इनसे सर्वथा अलग रहना चाहिए।

■

राशियों का मासफल

शनिवार - ०१-०२-२०२५ से २८-०२-२०२५ तक शुक्रवार

***डॉ0 दिग्विजय शुक्ल**

मेषः- परिवार में सुखद समाचार मिलेगा। सभी विरोधी परास्त होंगे मित्रगणों के साथ भ्रमण करने का सुयोग बनेगा। भौतिक सुख सुविधाओं में निरथर्क धन का अपव्यय होगा। मानसिक तनाव उत्पन्न होगा। व्यवसायिक कार्यों में सफलता मिलेगी।

वृषः-आर्थिक दृष्टि से मजबूत होंगे। सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी। किसी निकटस्थ का मिलना संभव है। प्रतियोगिता में सफलता मिलेगी। कार्मिक क्षेत्र में समर्पण का भाव अच्छा होगा। भोग-विलासता में लगाव बढ़ेगा। प्रवासी समय व्यतीत होगा।

मिथुनः-आपके कर्म क्षेत्र में अच्छे परिणाम मिलेंगे। कार्मिक क्षेत्र में मेल मिलाप आवश्यक होगा। धार्मिक कार्य करने के अवसर बनेगें। परिवार में प्रेम सौहार्द रखना होगा। शिक्षा के प्रति अभिरुचि बढ़ेगी। व्यापारी वर्ग लाभान्वित होंगे।

कर्कः- आपके मन में संदिग्धता की स्थिति उत्पन्न होगी। धर्म के प्रति आस्था का भाव उत्पन्न होगा। संतान समृद्धिशाली होंगे। कर्म क्षेत्र में सफलता मिलेगी। अर्थ का लाभ एवं स्वजनों में प्रेम-बढ़ेगा। विशेष करके मानसिक परेशानी दूर होगी।

सिंहः- व्यापारिक वर्ग लाभान्वित होंगे। किसी निकटस्थ व्यक्ति के सहयोग से लाभ होगा। आर्थिक विपन्नता दूर होगी। धर्म के प्रति रुझान बढ़ेगा। परिवार में प्रेम बढ़ेगा। शिक्षा और कर्म क्षेत्र में सजग व सतर्क रहना होगा। आश्चर्यजनक कार्य सिद्ध होगा

कन्याः-आकस्मिक वाद-विवाद में मन अशान्त होगा। परन्तु कोई रुका हुआ कार्य सिद्ध होगा। आर्थिक रूप से सम्पन्नता होगी। पत्नी से मेलजोल रखना आवश्यक है। प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता प्रयास से मिलेगी। व्यापार में मन लगाने की जरूरत है।

■

*ज्योतिष विभागाध्यक्ष, श्रीगोरक्षनाथ संस्कृत विद्यापीठ, गोरखनाथ, गोरखपुर

तुलाः– आप इस समय ऊर्जावान महसूस करेंगे। धर्म के प्रति रुचि उत्पन्न होगी। परिवार में गिले शिकायत दूर होंगे। जिससे श्रेष्ठ जन का आशीर्वाद मिलेगा। आर्थिक संकट दूर होगा। शिक्षा एवं व्यापार में लोगों का सहयोग भरपूर मिलेगा।

वृश्चिकः– आपको सामाजिक कार्यों में सफलता मिलेगी। मीठी वाणी का प्रयोग करें। तीर्थाटन का सुअवसर बनेगा। अवरूद्ध कार्यों में सफलता मिलेगी। आर्थिक संकट दूर होगा। प्रतियोगी परीक्षा में परिणाम अच्छे ओयेंगे। भूमि भवन निर्माण के योग बनेंगे। ।

धनुः– कार्मिक क्षेत्र में सफलता मिलेगी। धर्म के प्रति विश्वास बढ़ेगा। सन्तान के प्रति शुभ संकेत मिलेंगे। भविष्य बनाने के लिए व्यापार करना होगा। पारिवारिक सम्बन्ध मधुर होगें, धन से मजबूत होंगे। प्रतिस्पर्धादि कार्यो में सफतला मिलेगी।

मकरः– आपकी शारीरिक एवं मानासिक परेशानी बढ़ सकती है। परिवार में प्रेम बढ़ेगा। जोखिम भरे कार्यों में सफलता मिलेगी। भ्रमण करने का सुयोग बनेगा। आर्थिक व्यय बढ़ेगा। माता–पिता एवं गुरुजनों के प्रति श्रद्धावान होगें। व्यापार में ध्यान जरूरी है।

कुंभः– अपने श्रेष्ठजनों के प्रति लगाव बढ़ेगा। वाणी में मधुरता लाना जरूरी है। छात्रों के लिए यह समय परिश्रम के होगें। कर्म क्षेत्र में परिश्रम से लाभ मिलेगा। दूरस्थ यात्रा करनी पड़ सकती है। पारिवारिक सम्बन्ध अच्छे होंगे। व्यापार में सजगता जरूरी है।

मीनः– परिवार की परेशानी दूर होगी। धार्मिक कार्यों में रुचि बढ़ेगी। आर्थिक विपन्नता दूर होगी। आर्थिक उत्थान में वृद्धि होगी। प्रतियोगी परीक्षा में सफलता मिलेगी। व्यापार के सुअवसर–बनेंगे। सामाजिक कार्यों में सफलता के सुअवसर मिलेंगे।

■

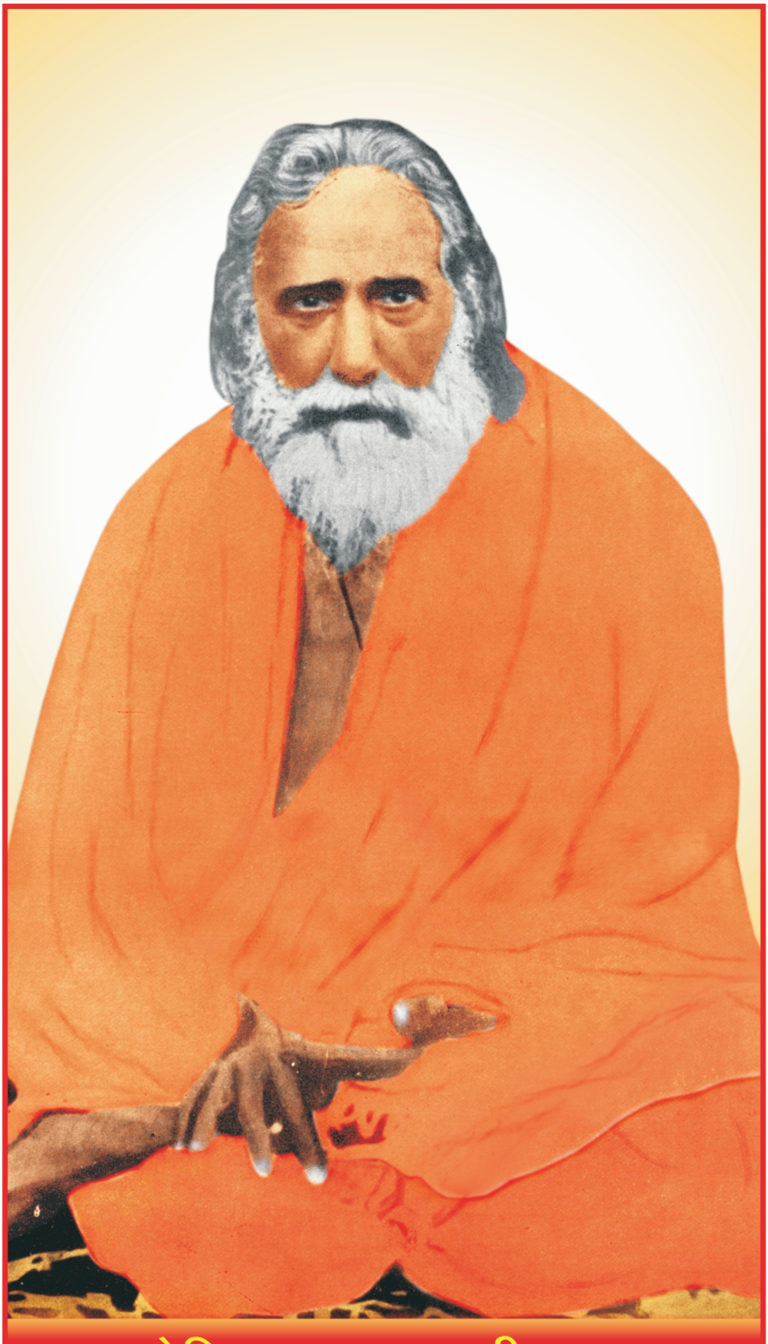

योगिराज बाबा गम्भीरनाथ

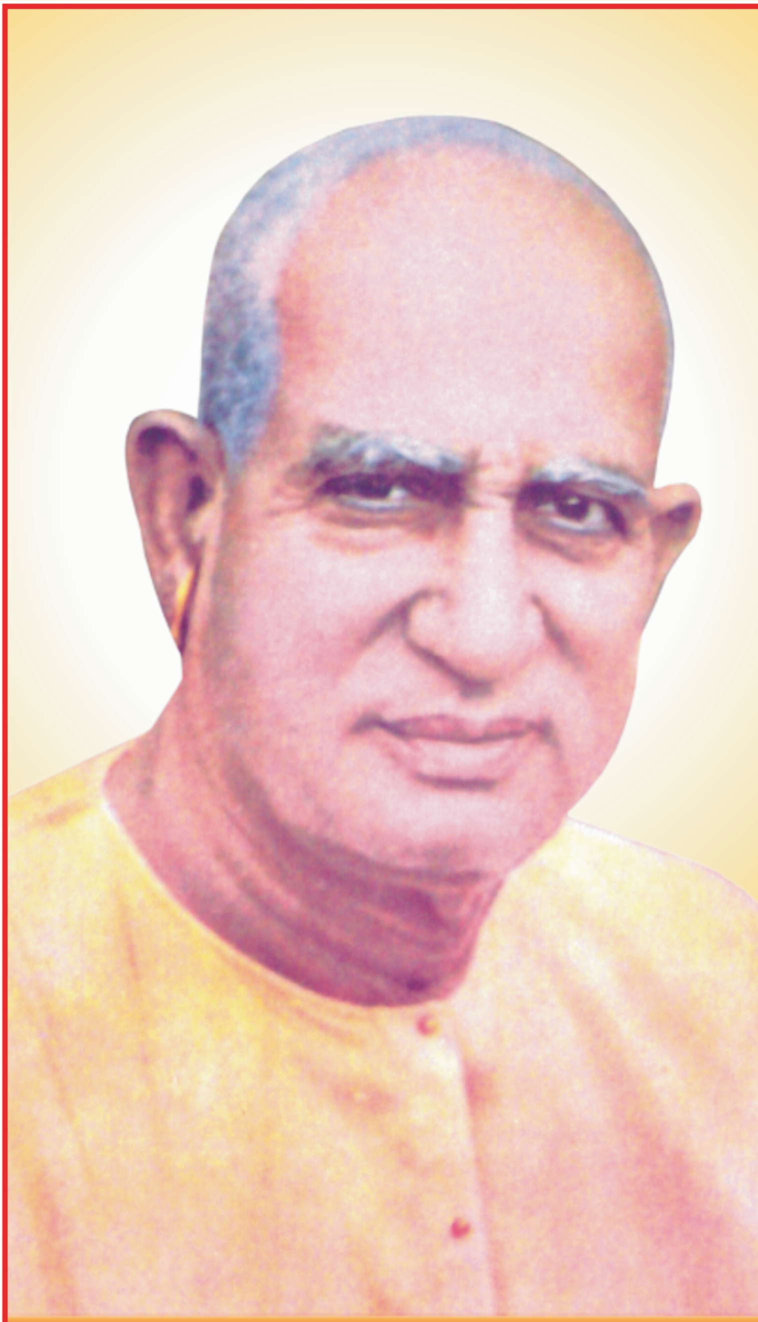

युगपुरुष ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज

भारतीय ज्ञान परम्परा में कुम्भपर्व का ज्योतिषीय दृष्टिकोण

*प्रो. परमानन्द भारद्वाज

भारतीय सनातन संस्कृति और समाजिक आस्था का महापर्व है कुम्भस्नान। भारतीय ज्ञान परम्परा में यह महापर्व कुम्भ स्नान ज्योतिषीय ग्रह-गणित पर आधारित है। वैसे तो भारत वर्ष में अनेकों व्रत-पर्व व उत्सव मनायें जाते हैं किन्तु महाकुम्भ, पूर्णकुम्भ अर्धकुम्भ स्नान १४४ वर्ष, १२ वर्ष, ६ वर्ष में क्रमशः एक बार आता है। भारतीय सनातन परम्परा में जितने भी व्रत-पर्व व उत्सव हुआ करते हैं, उन सब का तीन शास्त्रों से हमें ज्ञान प्राप्त होता है। ज्योतिष शास्त्र इन व्रत-पर्व व उत्सव को मनाने का काल निर्धारित करता है तथा धर्मशास्त्र स्मृतिग्रन्थ व पौराणिक परम्परा इनकों करने का उद्देश्य व महत्व बताती हैं। इन व्रत पर्व व उत्सव को कैसे मनाया जाये? इनको करने की क्या विधि हुआ करती है? इन सब बातों का निर्णय कर्मकाण्ड (पौराहित्य शास्त्र) बताता है। अर्थात् महाकुम्भ कब होगा? इसका निर्णय ज्योतिषशास्त्र करता है। भारत भूमि, व्रतों और पर्वों का देश है। इस भू-भाग में नदी-नाले, पर्वत, वन, गुफायें, द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग, 51 शक्तिपीठ, असंख्य तीर्थों के दर्शन हुआ करते है। प्रत्येक दिन, तिथि, नक्षत्रादि किसी न किसी देवता से जुड़े हुए है। प्रत्येक महिने में पांच पर्व नियत है-

अमावस्याष्टमी चैव पूर्णिमा च चतुर्दशी।
इति पर्वाणि कथ्यन्ते रविसङ्क्रान्तिगं दिनम्।।

अमावस्या, अष्टमी, पूर्णिमा, चतुर्दशी और संक्रान्ति ये पांच पर्व ज्योतिषशास्त्र प्रतिमास बताता है। इनमें दान स्नानदि का विशेष महत्व कहा गया है। इसके अतिरिक्त, अमृतकाल वारुणी पर्व, सूर्यचन्द्र, ग्रहण पर्व तथा महाकुम्भ पर्व का विशेष महत्व कहा गया है।

क्यों महाकुम्भ पर्व हुआ करता है ? इसका निर्णय धर्मशास्त्र और कैसे महाकुम्भ पर्व में स्नान-दानादि किया जाता है? इसका निर्णय कर्मकाण्डशास्त्र किया करता है। इन तीनों शास्त्रों द्वारा भारतीय ज्ञान परम्परा के अनुसार महाकुम्भादि पर्व भारत वर्ष की इस पुण्यधरा पर मनायें जाते हैं। यह सनातन परम्परा आदि युग से निरन्तर प्रवाहित हो रही है। इस महाकुम्भ पर्व में ज्योतिषीय ग्रहस्थिति की विवेचना करते है।

भारतवर्ष में चार तीर्थ स्थानों में भिन्न-भिन्न समय में चार कुम्भ पर्व मनाये जाते है। ये चार स्थान हरिद्वार, प्रयागराज, उज्जैन एवं नासिक है

*आचार्य, ज्योतिष विभाग, श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय,नई दिल्ली

चार स्थानों में ही कुम्भपर्व क्यों?

शास्त्रार्थ महारथी आचार्य श्री पं.माधावाचार्य शास्त्री जी ने ''क्यों'' नामक ग्रन्थ धर्मदिग्दर्शन पूर्वाद्ध एवं उत्तरार्ध लिखकर सनातन धर्म की अनन्य रक्षा की है। इस ग्रन्थ के माध्यम से गूढ रहस्यों का प्रतिपादन किया है। चार स्थानों में कुम्भ क्यों ? धर्म दिग्दर्शन उत्तरार्द्ध में इसका उत्तर इस प्रकार से दिया है–

विविध पुराणों व संहिताओं के अनुसार कथानक सर्व विदित है कि समुद्र मंथन से जो अमृत भगवान धन्वन्तरी द्वारा प्रादुर्भूत किया गया, उसे हथियाने के लिए देव–दानव में परस्पर छीना झपटी होने लगी। **अहं पूर्वमहं पूर्वं न त्वां न त्वमिति प्रभो।२**

ऐसा कहते हुए आपस में लड़ने लगे। उस समय भगवान श्री विष्णु जी के संकेत पर देवगुरु बृहस्पति के नेतृत्व में इन्द्र पुत्र जयन्त ने उस अमृत कुम्भ को उठा लिया। घड़ा टूट न जाये एतदर्थ सूर्य को उसकी रक्षार्थ नियुक्त किया गया, अमृत सुख न जाये इसके लिए हिमरश्मि युक्त चन्द्रमा को तैनात किया गया। ये सभी देवगण गुरु, सूर्य, चन्द्रमादि अमृत को छुपाने के लिए तीनों लोकों में भ्रमण करते रहे किन्तु दानवों ने इनका पीछा किया। भू–लोक में दिव्य बारह (१२) दिनों तक (मानव के १२ वर्षों तक) अमृत कुम्भ को चार–बार भूमि पर रखने का अवसर आया उस समय रखने उठाने में कुछ अमृत की बूंदे इन चार स्थानों में गिर गयी। जहां चार स्थानों में कुम्भ रखा गया वे हरिद्वार, प्रयाग, नासिक व उज्जैन थे। अतः सूर्य, चन्द्रमा और बृहस्पति के योग से बारहवर्ष में चारों स्थानों में कुम्भ पर्व का योग बनता है। मेष–वृष के गुरु प्रयागराज में, सिंहराशि के गुरु में नासिक उज्जैन व कुम्भराशि के गुरु में हरिद्वार में कुम्भपर्व मनाया जाता है।

उपरोक्त कथानक का वर्णन अथर्ववेद में भी प्राप्त होता है कि समुद्र मंथन के समय प्रकट अमृत से पूर्ण कुम्भ जिन जिन स्थानों में स्थापित किया गया था, वहां वहां सन्त महात्माओं ने कुम्भ पर्व को होते देखा है। इस कुम्भ पर्व को सर्वोत्तम वैकुण्ठ के समान पवित्र माना है।

पूर्णः कुम्भोऽधिकाल आहितस्तं वै पश्यामो बहुधानु नु सन्तः।
स इमा विश्वा भुवनानि प्रत्यङ्गकालं तमाहुः परमे व्योमन्।

चतुरः कुम्भाँश्चतुर्धा दधामि। इन कुम्भ स्थानों में महाकुम्भ पर्व के काल निर्णय में प्रायः कुछ प्रयाग कुम्भ पर विवाद उठता रहता है पूर्वकाल में ऐसे विवाद कई बार सामने आये है किन्तु वर्तमान काल में यह समस्या अब प्रायः समाप्त हो गयी है। क्योंकि यह घटना एक शताब्दी में एक बार इन विवाद के मूल में होती है। कारण

सम्भवत: निम्न दो मत रहे हैं।

प्रयागराज-कुम्भपर्व

1. इस मत के अनुसार जब बारह वर्ष के गुरु भ्रमणकाल में बृहस्पति वृषराशि में हो तो प्रयागराज में, जब कुम्भ राशि में हो तो हरिद्वार में और जब सिंह राशि में हो तो उज्जैन और नासिक में कुम्भपर्व मनाया जाना चाहिए और मनाया जाता भी है। इस पक्ष को गुरु स्थिति पक्ष के आधार पर हम कहेंगे। इस पक्ष के अनुसार गणितीय स्थिति पर आधारित स्व स्थानीय प्रत्येक कुम्भ ८ (आठ) कुम्भपर्वों में से एक कुम्भ अपने स्व स्थानीय कुम्भ से ११वें वर्ष आयेगा और शेष सात कुम्भ १२ वें वर्ष में ही आयेंगे।

2. द्वितीय मत- इस मत के अनुसार प्रत्येक स्थान के कुम्भ पर्व अपने पूर्ववर्ती स्वस्थानीय कुम्भपर्व से १२वें वर्ष ही मनाया जाना चाहिए। इस कथन की पुष्टि निम्न वाक्य से की गई है-

देवानां द्वादशाहोभिः मान्यै द्वादशवत्सरैः।
जायन्ते कुम्भपर्वाणि तथा द्वादश संख्यया॥

इस पक्ष को द्वादश सौरवर्ष पक्ष या बारह वर्ष का पक्ष कहेंगें।

हरिद्वारे कुम्भ योगो मेषार्के कुम्भगे गुरौ।
प्रयागे वृषस्थेऽज्ये मकरस्थे दिवाकर॥
उज्जयिन्यां च मेषार्के सिंहस्थे च बृहस्पतौ।
सिंहस्थेऽज्ये सिंहेऽर्के नासिके गौतमीतटे॥

ये दोनों मत वस्तुत: पृथक् पृथक् रूप में केवल आभासित होते है परन्तु इसमें काल गणना से कुछ थोड़ा अन्तर आ सकता है। प्रथम पक्ष गुरु के स्थिर राशि वृष-सिंह व कुम्भ को आधार मानता है तथा द्वितीय पक्ष बारह वर्ष को ही। इसी कारण कुछ प्रमाण गुरु की राशि स्थिति के अतिरिक्त द्वितीय पक्ष बारह (१२) वर्ष के पक्ष को पुष्ट करते हैं। जैसे कि-

मेष राशि गते जीवे, मकरे चन्द्रभास्करौ
अमावस्या तदा योगः कुम्भाख्यस्तीर्थनायके॥

यहां मेष राशि के गुरु में प्रयाग में कुम्भपर्व की बात कही है क्योंकि १२ वर्षीय अन्तराल के अनुसार ८ कुम्भ, ९६ वर्ष में पूर्ण होंगे। अर्थात् एक शताब्दी में आठ बार कुम्भ पर्व मनाया जायेंगा। ७ कुम्भ तो ठीक ८४ वर्ष में वृष राशी के गुरु में ही आयेंगे किन्तु आठवाँ कुम्भ ११ वे वर्ष में मेष राशि के गुरु में आयेगा। उस समय श्रवण नक्षत्र आदि सम्पूर्ण योग भी प्राप्त होंगे। अत: यह घटना आकाशीय ग्रह गणित से ९५

वर्ष में एक बार घटित होगी !

इस घटना का मुख्य कारण गुरु का वक्री या अतिचारी होना हुआ करता है, यद्यपि अग्रिम वर्ष में वृष राशि के गुरु में भी यह सूर्य चन्द्रमा व गुरु की यथा स्थिति आयेगी किन्तु उस वर्ष श्रवण नक्षत्र आदि सभी योग प्राप्त नहीं होंगे। श्रवण नक्षत्र व व्यतीपात योग का भी कुम्भ स्नान से सम्बन्ध हुआ करता है।

प्रयागराज में गंगा, यमुना और सरस्वती का संगम है इसलिए त्रिवेणी कहते है यहां माघ मास निवास को कल्पवास कहते है।

प्रयागे माघ-पर्यन्तं त्रिवेणी संगमे शुभे।

निवासः पुण्यशीलानां कल्पवासो हि कथ्यते।।

तीर्थराज प्रयाग देवताओं के लिए भी दुर्लभ है। तीनों लोकों में तीर्थराज प्रयाग के समान कोई तीर्थ नहीं है। जैसे ग्रहों में सूर्य, नक्षत्रों में चन्द्रमा श्रेष्ठ है उसी प्रकार से समस्त तीर्थों में प्रयाग तीर्थराज में माघमास स्नान श्रेष्ठ है। पतित पावनगंगा, पुण्य दायिनी यमुना और ज्ञान दायिनी सरस्वती तीनों के संगम से त्रिवेणी नाम पड़ा है। गंगा जी सर्वत्र सरलता से सुलभ और शुभफल देने वाली है किन्तु हरिद्वार, प्रयाग और गंगा सागर तीन स्थानों में दुर्लभ है।

अधिकांश प्रमाण गुरु की उपरोक्त स्थिर राशि वृष-सिंह और कुम्भ राशि में आने पर ही कुम्भपर्व को प्रमाणित करती है। इस बृहस्पति के इन राशियों के साथ सूर्य और चन्द्रमा की स्थिति भी कुम्भपर्व के महत्व को बताती है। सर्वप्रथम हम प्रयागराज कुम्भ की ही बात करते है जो अभी कुछ दिनों से चल रहा है। विक्रम संवत् २०८१ में प्रयागराज में कुम्भ के समय ग्रह स्थिति कब और क्या रहेगी?

इसका विश्लेषण करते है तथा इस कुम्भपर्व में विशेष शाही स्नान की तिथियों को भी दर्शाते है। सर्व प्रथम इस कुम्भ के शास्त्रीय वचनों को उद्‌घृत करते है।

मकरे च दिवानाथे वृषराशिगते गुरौ।

प्रयागे कुम्भयोगौ वै माघमासे विवुक्षये।।

अर्थात् मकरराशि में सूर्य और वृषराशि में गुरु हो तो इस योग में प्रयागराज में कुम्भपर्व कहा गया है। यह स्थिति वि.स. २०८१, माघ कृष्ण पक्ष प्रतिपदा, मंगलवार तदनुसार १४ जनवरी २०२५ - मकर सङ्क्रान्ति से प्रारम्भ हो रही है।

मकर संक्रान्ति के पूर्व दिवस को लोहड़ी आदि त्यौहार भी मनाये जाते है। इसलिए उस दिन से ही मकर संक्रान्ति के त्यौहार की तैयारी हो जाती है इस वर्ष १३ जनवरी २०२५ को पौष पूर्णिमा होगी। यहां से ही कुम्भ पर्व का शाही स्नान की प्रारम्भ होगा। इस कुम्भ में शाही स्नान की व विशेष स्नान तिथियां निम्न होगी।

क्रम. सं.	पर्व नाम	दिनाङ्क	विशेष व शाही स्नान
1.	पौष पूर्णिमा -	१३ जनवरी २०२५	विशेष स्नान
2.	मकर संक्रान्ति -	१४ जनवरी २०२५	प्रथम शाही स्नान
3.	माघ कृष्ण एकादशी-षट्तिला	२५ जनवरी २०२५	विशेष स्नान
4.	मौनी अमावस्या	२९ जनवरी २०२५	द्वितीय शाही स्नान
5.	वसन्त पंचमी	०२ फरवरी २०२५	तृतीय शाही स्नान
6.	रथ सप्तमी	०४ फरवरी २०२५	विशेष स्नान
7.	भीष्माष्टमी	०५ फरवरी २०२५	विशेष स्नान
8.	माघ-शुक्ल जया एकादशी	०२ फरवरी २०२५	विशेष स्नान
9.	माघ पूर्णिमा	१३ फरवरी २०२५	चतुर्थ शाही स्नान
10	शिवरात्रि	२६ फरवरी २०२५	पंचम व अन्तिम शाही स्नान

उपरोक्त शाही स्नान तिथियों में पहले अखाडों के साधु-सन्तों के स्नान होते हैं उसके पश्चात् आम जनता स्नान करती है तथा विशेष स्नान तिथियां सभी सनातन परम्परा को मानने वालों के लिए दी गयी है। प्रयाग कुम्भ पर्व के लिए कुछ और शास्त्रीय वचन ज्योतिषीय ग्रह स्थिति के बारे में मिलते है -

माघे वृषगते जीवे, मकरे चन्द्रभास्करौ।
अमावस्या ततो योगः कुम्भाख्यस्तीर्थनायके।।

अर्थात् माघमास, वृषराशि में गुरु हो, मकर राशि में चन्द्रमा और सूर्य हो तो अमावस्या के योग से तीर्थराज में कुम्भपर्व मनाया जाता है। इस वर्ष यह योग मौनी अमावस्या २९ जनवरी २०२५ को बन रहा है। और भी -

मकरे च दिवानाथे वृषगे च बृहस्पतौ।
कुम्भयोगो भवेत्तत्र प्रयागे चातिदुर्लभः।।

अर्थात् मकर राशि में दिन नायक सूर्य हो और वृषराशि में बृहस्पति हो तो कुम्भ योग प्रयाग में बनता है जो कि अति दुर्लभ होता है।

प्रयाग में कुम्भपर्व स्नान के दिन प्रातः अरुणोदयकाल में दैनिक स्नान सन्ध्यादि से निवृत्त होकर त्रिवेणी में पहुँच कर स्नान संकल्प किया जाना चाहिए। इस कुम्भ पर्व के देवता-शिव, धर्मराज, ब्रह्मा, विष्णु एवं गंगा-यमुना-सरस्वती होते हैं।

त्रिवेणी स्नान संकल्प-

ॐ तिथिर्विष्णुस्तथा वारं, नक्षत्रं विष्णुरेव च।
योगश्च करणश्चैव, सर्वं विष्णुमयं जगत्॥

संकल्पः-

हरिः ॐ तत्सत् तत्सत् तत्सत् श्रीविष्णुर्विष्णुर्विष्णुः, अद्येह श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य सकलजगत्सृष्टिकारिणः ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयेपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे सत्यत्रेताद्वापरान्ते कलियुगे कलिप्रथमचरणे अस्मिन् भूर्लोके जम्बुद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत अमुक यमुनानद्याः अमुकदिग्भागे, अमुक-ग्रामे, अमुकमार्गे,, भगवतः संन्निधौ षष्टिसंवत्सराणां मध्ये, ...नामकसंवत्सरे,........... अयने, ऋतौ, मासानां मासोत्तमे मासे, ...मासे, शुभपुण्यतिथौ, ...वासरे, ...योगे,... राशिस्थिते श्रीसूर्ये, ... राशिस्थिते श्रीचन्द्रे, ...राशिस्थिते श्रीदेवगुरौ यथा यथा राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अद्येह, ...गोत्रेत्पन्नोऽहं, ... प्रवरान्वितः .....शाखाध्यायी, भगवतो बलेन भगवतो वीर्येण भगवतस्तेजसा श्रीमद्भगवद्भागवताचार्यमुखोल्लासार्थं भगवत्कैंकर्यादिसिद्ध्यर्थं बह्मवर्चस्वप्राप्तये च अद्यावधि बोधाबोधपूर्व कृतानां पापानां मार्जनाय जन्ममरणावर्त्तान्मुक्तये च भगवत्याः त्रिवेण्याः (गंगायमुनासरस्वती त्रय्याः) शिव-धर्मराजब्रह्मणां च विविधोपचारपूजां विधाय प्रयागतीर्थेऽस्मिन् त्रिवेणीपावनसंगमे स्नानमाचरिष्यामि।

यहां संकल्प को कालबोध के रूप में ज्योतिषीय दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है। बिना काल ज्ञान के व्रत-पर्व-त्यौहार व उत्सवादि का कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता है।

हरिद्वार-कुम्भपर्व

कुम्भराशि में बृहस्पति हो और मेष राशि में सूर्य जब होते है तो उस समय हरिद्वार में कुम्भपर्व नायक उत्तम योग बनता है।

पद्मिनीनायके मेषे कुम्भराशिगते गुरौ।
गंगाद्वारे भवेद्योगः कुम्भनामा तदोत्तमः॥

विषुव काल में मेषादि के समय अक्षय तृतीया अर्थात् वैशाख शुक्ल तृतीया, और तुलादि के समय (अक्षय नवमी) कार्तिक शुक्ल नवमी का दिन स्नान दानादि के लिए विशेष होता है। मेषादि व तुलादि सायन संक्रान्ति के दिन को ही विषुव संक्रान्ति कहते है। उस दिन दिनरात बराबर हुआ करती है।

''समरात्रिन्दिवे काले विषुवद् विषवं च ततः इत्यमरः।।

स्कन्दपुराण के हरिद्वार माहात्म्य में भी हरिद्वार कुम्भपर्व का उल्लेख मिलता है

''हरिद्वारे कुम्भयोगो मेषार्के कुम्भगे रवौ''

अर्थात् हरिद्वार में कुम्भपर्व तब होता है जब कुम्भराशि में गुरु और मेषराशि में सूर्य होते है उस समय हरिद्वार में गंगा स्नान करने पर पुनः संसार में जन्म नहीं होता। अर्थात् मुक्ति प्राप्त होती है इसकी महिमा पुराणों में इस प्रकार से वर्णित है-

वसन्ते विषुवे चैव घटे देव पुरोहिते।
गङ्गाद्वारे च कुम्भाख्यः सुधामेति नरो यतः।।
कुम्भराशि गते जीवे यद्दिने मेषगे रविः।
हरिद्वारे कृतं स्नानं पुनरावृत्तिवर्जनम्।।

गंगा के अवतरण के लिए राजा भगीरथ ने हजारों वर्ष तक ब्रह्मा, शंकर, गंगा व जहनु ऋषि की तपस्या की, उसके परिणाम स्वरूप गंगा जी का पृथ्वी पर अवतरण हुआ।

तत्र वर्ष सहस्रश्च समाराध्य पुनः पुनः।
ब्रह्माणं शंकरं जह्नुं भुवि गंगामयोऽजयत्।।

उज्जैन-कुम्भपर्व

महाकाल वन में स्थित उज्जयिनी वर्तमान में उज्जैन नाम से विश्व विख्यात है। मेषराशि में सूर्य और सिंह राशि में बृहस्पति जब होते है उस समय उज्जैन में शिप्रा नदी में समस्त सुखों की वृद्धि करने वाला कुम्भपर्व होता है।

मेषराशिं गते सूर्ये सिंहराश्यां बृहस्पतौ।
उज्जयिन्यां भवेत् कुम्भः सर्वसौख्यविवर्द्धनः।।
मेषसिंहद्वयोरर्के जीवयो क्रमशः स्थितौ।
पूर्णिमायां भवेत् कुम्भ उज्जयिन्यां सुखप्रदः।।
मेषराशिगते सूर्ये सिंहराशौ बृहस्पतिः।
पूर्णिमायां भवेत् कुम्भ उज्जयिन्यां सुखप्रदः।।

अर्थात् वैशाख शुक्ल पक्ष पूर्णिमा के दिन मेषराशि के सूर्य, सिंह राशि के बृहस्पति तथा तुलाराशि स्वातिनक्षत्र में चन्द्रमा होने पर पूर्णिमा के दिन उज्जैन कुम्भपर्व मनाया जाता है। इसका द्वितीय पक्ष भी मिलता है-

माघवे धवले पक्षे सिंहे जीवेत्वजे रवौ।
तुलाराशौ क्षपानाथे, स्वाति मे पूर्णिमा तिथौ।।
व्यतीपाते तु सम्प्राप्ते चन्द्रवत्सर संयुते।
एते दशमहायोगाः स्नानान्मुक्तिफलप्रदा।।

अर्थात् १.वैशाख मास २.शुक्लपक्ष ३.मेषस्थ सूर्य ४.तुलाराशि ५.स्वाति नक्षत्र, ६. व्यतीयात योग ७.सोमवार दिन, ८.पूर्णिमा तिथि ९.शिप्रानदी और १०.उज्जैन तीर्थ इन दस महायोग में शिप्रा स्नान मुक्ति प्रदायक होता है। कार्तिक और वैशाख मास में जब सूर्य उच्च या नीच का रहता है तब पवित्र शिप्रा नदी में स्नान करने से सभी क्लेशों एवं दु:खों का निवारण हो जाता है-

कार्तिके चैव वैशाखे नीचोच्चे दिवाकरे।
शिप्रा स्नानं प्रकुर्वीत क्लेशदु:खनिवारणम्।।

उज्जैन कुम्भपर्व पर ज्योतिषीय ग्रह स्थिति का शास्त्रीय वचनानुसार प्रतिपादन किया गया है।

नासिक-कुम्भपर्व

"हरिद्वारे प्रयागे च धारा गोदावरी तटे" के अनुसार चौथा कुम्भ पर्व स्नान नासिक आता है। नासिक का कुम्भपर्व अपना अलग स्थान रखता है। यह कुम्भपर्व दक्षिण भारत का प्रतिनिधित्व करता है। नासिक कुम्भपर्व पर ग्रहों का योग इस प्रकार से बनता है-

सिंहराशिगते सूर्ये, सिंहराश्यां बृहस्पतौ।
गोदावर्यां भवेत् कुम्भो जायते खलु मुक्तिद:।।
सिंहे गुरुः तथा भानुः चन्द्रश्चन्द्रक्षयस्तथा।
गोदावर्या तदा कुम्भो जायतेऽवनिमण्डले।।

अर्थात् सिंहराशि में गुरु और सूर्य जब दोनों एक साथ स्थित होते हैं तब गोदावरी तट पर नासिक में मुक्ति प्रदायक कुम्भ पर्व होता है। अथवा सिंहराशि में गुरु, सूर्य और चन्द्रमा तीनों स्थित हों अर्थात् यह भाद्रपद मास की अमावस्या को भूमण्डल के पुण्यक्षेत्र गोदावरी के तट पर नासिक में कुम्भपर्व होता है तथा स्नान करने पर फल पुण्यदायक होता है:

सप्तगोदावरीं स्नात्वा स्थित्वा च नियताशने।
महापुण्यमवाप्नोति देवलोकं च गच्छति।।

भूमण्डल के सभी तीर्थ, नदियां, सागरक्षेत्रा, अरण्य, आश्रयादि और इन्द्रादि सभी देवगण गोदावरी के तट पर सिंहराशि में गुरु के प्रवेश करने पर एकवर्ष पर्यन्त निवास करते है अर्थात् सिंहस्थ गुरुकाल में गोदावरी स्नान का पुण्य लाभ अर्जित करते है। श्रीराम भगवान् ने पंचवटी के नासिकक्षेत्र में बहुत समय तक निवास किया था और गोदावरी में ही अपने पूज्य पिता जी का श्राद्ध एवं तर्पण किया था। वह स्थान रामकुण्ड के नाम से प्रसिद्ध है।

दृष्ट्वा पंचवटीस्थानं तथा गोदावरी नदी।
आजन्म संचितात्पापान्मुच्यते नात्र संशय॥

अर्धकुम्भ पर्व

इस शोधपत्र में चार कुम्भ पर्वों पर ज्योतिष व धर्मशास्त्र आदि शास्त्रीय प्रमाणों के आधार पर विस्तृत चर्चा करने का प्रयास किया है। इन चार कुम्भ पर्वों के अतिरिक्त हरिद्वार और प्रयागराज में अर्धकुम्भ पर्व भी मनाये जाते है। अर्धकुम्भ पर्व में भी ज्येतिषीय दृष्टिकोण ही हुआ करता है। अर्धकुम्भ का माहात्म्य भी महाकुम्भ की तरह ही पुण्यफल दायक हुआ करता है। इसके फल को यत्किञ्चित् ही न्यून माना जाता है। हरिद्वार का अर्धकुम्भ सिंहस्थ गुरु के समय मेष संक्रान्ति के दिन होता है उस समय उज्जैन में महाकुम्भ पर्व होता है। प्रयागराज का अर्धकुम्भ वृश्चिक राशिस्थ गुरु के समय माघ मास की मौनी अमावस्या को मनाया जाता है। उज्जैन और नासिक में अर्धकुम्भ पर्व की परम्परा नहीं है।

कुम्भशब्द का अर्थ साधारणतया घड़ा या घट किया जाता है तथा राशीयों में १२ राशि में से एक कुम्भराशि है। यहां कुम्भ शब्द अमृत कुम्भ (सुधाकुम्भ) के लिए ही प्रयोग किया गया है।

सूर्येन्दुगुरुसंयोगात् यद्राशौ यत्र वत्सरे।
सुधाकुम्भप्लवे भूमौ कुम्भो भवति नान्यथा॥

कुम्भ स्नान का फल इस प्रकार से कहा है–

सहस्रं कार्तिके स्नानं माघे स्नानं शतानि च।
वैशाखे नर्मदा कोटिः कुम्भस्नानेन तत्फलम्॥

और भी कहा है–

अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च।
लक्षं प्रदक्षिणाभूमे कुम्भस्नानेन तत्फलम्॥
इति शम्।

■

धार्मिक दृष्टि से कुम्भ का महत्त्व

*डॉ0 शैलेश कुमार तिवारी

अवतरणिका–

कुम्भ विश्व का सबसे बड़ा मेला या पर्व है। प्राचीनकाल से ही इसके प्रति लोगों की अगाध आस्था व श्रद्धा रही है। यही कारण है कि लाखों की संख्या में दूर–दूर से श्रद्धालु सन्त महात्मा विद्वान् और धर्मप्रचारक इस मेले में भाग लेते रहे हैं। प्राचीनकाल में जब वाहन आदि संसाधन उपलब्ध या सुलभ नहीं थे, सड़कें भी अच्छी नहीं थी तब भी दूर–दूर ये अपने अपेक्षित सामान की गठरी सिर पर रखकर कई दिनों की पैदल यात्रा कर लाखों की संख्या में पहुँच कर इस महापर्व की भव्यता, दिव्यता एवं विशालता को समृद्ध करते हुए पुण्यार्जन करते थे। आज अपेक्षित सर्व संसाधन सम्पन्न इस वैज्ञानिक युग में इस पर्व की भव्यता और उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। पर जहाँ एक ओर इसकी विशालता एवं भव्यता बढ़ती जा रही है वहीं दूसरी ओर कुछ विकृतियां भी दृष्टिगोचर हो रही हैं। कई प्रकार की भ्रान्तियां एवं अन्धविश्वास भी देखने को मिल रहे हैं। बहुत से लोगों को कुम्भ के बारे में सही जानकारी भी नहीं है। इसलिये कुम्भ पर यह सामान्य परिचयात्मक लेख प्रस्तुत है।

कुम्भ सुनते ही हमारे मन में जिज्ञासाएं उत्पन्न हो जाती हैं कि कुम्भ का क्या तात्पर्य है? कुम्भयोग कब होता है? कुम्भ मेला है, या पर्व है, या उत्सव है या और कुछ? कुम्भ क्यों मनाया जाता है? धार्मिक दृष्टि से इसका क्या महत्त्व है? ऐतिहासिक दृष्टि से कुम्भ का क्या स्वरूप है? कुम्भ कहाँ–कहाँ, कब–कब आयोजित होता है? कुम्भ चार जगह ही क्यों आयोजित होता है? इसका धर्म, समाज, अर्थव्यवस्था, पर्यावरण, अन्धविश्वास निर्मूलन, कुरीति, दुर्व्यसनादि निराकरण, समाज सुधार आदि में क्या योगदान है? कुम्भ में अखाड़ा, नागा, संन्यासी, वैरागी आदि सन्त महात्माओं की विशेष भूमिका का आधार क्या है? इत्यादि। इस लघु लेख में कुम्भ के स्वरूप आदि के विवेचन के साथ इसके धार्मिक पक्ष को यथासम्भव संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है–

कुम्भ शब्द का अर्थ–

कुम्भ शब्द का लोक प्रचलित सामान्य अर्थ घड़ा है, यह सर्वविदित है। पर संस्कृत भाषा का यह शब्द है, और संस्कृत भाषा की यह विशेषता है कि एक–एक शब्द के

*आचार्य, व्याकरण विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी

अनेक अर्थ होते हैं। मूल अर्थ के निर्धारण में शब्द की व्युत्पत्ति की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। तदनुसार यदि विचार किया जाये तो ''कुं पृथिवीम् उम्भति अमृततत्त्वेन जलादिना पुण्यादिना वा प्रपूरयति इति कुम्भः'' अर्थात् जो पृथिवी को अमृत से, पुण्यादि से पूर्ण करे, भर दे, उसे कुम्भ कहते हैं। अथवा ''कुं पृथ्वीं भावयन्ति संकेतयन्ति भविष्यत्कल्याणादिकायस्थिता बृहस्पतिसूर्यादयो ग्रहाः संयुज्य हरिद्वारप्रयागादि-तत्तत्स्थानविशेषान् उद्दिश्य यस्मिन् स कुम्भः'' अर्थात् बृहस्पति सूर्यादि ग्रह पृथ्वी के भावी कल्याण को सूचित करने के लिए हरिद्वार प्रयाग आदि स्थान विशेष के उद्देश्य अवस्थित हो जिस योग या समय में वह कुम्भ है। कालिक दृष्टि से ऐसे ग्रह-योग जो खगोल में लुप्त-सुप्त अमृततत्व को प्रत्यक्ष प्रबुद्ध या उद्भूत कर देते हैं, ये ग्रह योग कुम्भपद से अभिहित होते हैं। ये ग्रह योग हरिद्वार, प्रयाग उज्जैन और नासिक में भिन्न-भिन्न समय पर बनते हैं। एक स्थान में प्रायः बारह वर्ष में यह योग बनता है।

कुम्भ नामकरण-

इस दुर्लभ योग, पर्व व पुण्य अवसर को कुम्भ क्यों कहा गया? इसके अनेक कारण अनुमित होते हैं। कुम्भ या कलश भारतीय आर्य संस्कृति में मंगल का प्रतीक माना गया है। कुम्भ समस्त ब्रह्माण्ड-भाण्ड का प्रतिनिधि या प्रतीक माना गया है। अमरत्व प्राप्ति हेतु समुद्र-मंथन से प्रकट अमृत कुम्भ से सम्बन्ध होने के कारण इसे कुम्भ तो कहते ही हैं, कुछ समीक्षकों के अनुसार यह पर्व तो अति प्राचीन है, परन्तु इसे कुम्भ नाम से तब व्यवहृत किया गया, जब हरिद्वार में कुम्भराशि में बृहस्पति की स्थिति होने पर इसे मेले का स्वरूप दिया गया। फिर बाद में प्रयाग आदि स्थानों में आयोजित होने वाले स्नान दानादि पर्व को भी कुम्भपद से व्यवहृत किया गया। अस्तु, यह ऐतिहासिक आदि दृष्टि से शोध एवं समीक्षा का विषय है। धार्मिक दृष्टि से विचार किया जाय तो कुम्भ के स्वरूप से इसका महत्व स्पष्ट हो जाता है-

कुम्भ का स्वरूप-

कुम्भ को भारतीय संस्कृति में मंगल, समृद्धि एवं ब्रह्माण्ड का प्रतीक माना गया है। हिन्दू संस्कृति में कोई भी धार्मिक अनुष्ठान क्यों न हो, कुम्भ के बिना नहीं होता है। कुम्भ को सभी देवताओं, तीर्थों, सागरों, नद-नदियों, वेद-वेदांगों एवं समस्त द्वीपों का आधार या निवास माना गया है। कलश के निर्माण के बारे में कहा गया है-

कलाः कला हि देवानां दानवानां कलाः कलाः।

संगृह्य निर्मितो यस्मात् कलशस्तेन कथ्यते ॥

अर्थात् देवताओं एवं दानवों की कलाओं (आनन्दात्मक अंशों) से निर्माण होने के कारण कुम्भ को कलश कहा जाता है। इसके अवयवों में देवताओं का निवास बताते हुए कहा गया है-

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः। मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः॥ कुक्षौ तु सागराः सप्त सप्तद्वीपा वसुन्धरा। ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः। अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः ॥

अत्र गायत्री सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा।

आयान्तु मम रक्षार्थं दुरितक्षयकारिकाः ॥

अर्थात् कलश के मुख में विष्णु, कण्ठ में रुद्र, मूल में ब्रह्मा, मध्यभाग में मातृगण, कुक्षि में सात सागर, सप्तद्वीप पृथिवी, अर्जुनी, गोतमी, चन्द्रभागा, सरस्वती, कावेरी, कृष्णवेणा, गंगा, ताप्ती गोदावरी माहेन्द्री, नर्मदा, अन्य समस्त नद-नदियां, पृथ्वी के सारे तीर्थ, समुद्र, सरित् आदि चारों वेद, समस्त वेदांग गायत्री, सावित्री, शान्ति, पुष्टि आदि आवाहित होते हैं। वरुण अर्थात् जलाधिपति का पूजन तो होता ही है। कलश के आधार में धूमार्चिष, ऊष्मा, ज्वलिनी, ज्वालिनी, विस्फुर्लिंगनी, सुश्री, सुखपा सुषमा कपिला, हव्यवाहा, कव्यवाहा रूप वाहि कलाओं का, कलश के ऊपर तपिनी, तापिनी, धूषा, भरिची, ज्वालिनी, रुचि, सुषुम्णा, भोगदा, विश्वा, बोधिनी, धारिणी एवं क्षमा- इन बारह सूर्य कलाओं का तथा कलश के जल में वरुण एवं मातृकादि के साथ-साथ अमृता, मानदा, पूषा, पुष्टि, तुष्टि, रति, धृति, शशिनी, चन्द्रिका, कान्ति, ज्योत्स्ना, श्री, प्रीति, अंगदा, पूर्णा एवं पूर्णाप्रता इन सोम की १६ कलाओं का स्थान माना गया है। यह सामान्य दृष्टि से हर जगह मान्य है। प्रतिष्ठा या आगमिक अनुष्ठानों में और विशेष देवी-देवों का स्थान माना गया है। अर्थात् ब्रह्माण्ड के हर तत्त्व का समावेश कलश या कुम्भ में माना गया है। इसलिये कुम्भ की प्रार्थना में कहा गया है-

देवदानवसंवादे मथ्यमाने महोदधौ। उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भो विधृतो विष्णुना स्वयम्॥ त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः। त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः॥ शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः। आदित्या वसवो रुद्रो विश्वेदेवाः सपैतृकाः॥ त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः ॥

अर्थात् हे कुम्भ! तुम देवदानव द्वारा समुद्र-मन्थन से उत्पन्न हुए हो, स्वयं भगवान्

विष्णु द्वारा धारण किये गये हो, तुम्हारे जल में समस्त तीर्थ, समस्त देव, समस्त भूत, (पंचभूत या जीव) तथा समस्त प्राण स्थित व प्रतिष्ठित हैं। शिव, विष्णु व प्रजापति तुम स्वयं हो, आदित्य, वसु, रुद्र, सपैतृक विश्वेदेव आदि सब कामनाओं की सिद्धि प्रदान करने वाले तुम में निवास करते है। इससे सुस्पष्ट हो जाता है कि कुम्भ केवल एक जलपात्र ही नहीं है अपितु वह अपनी अनेक विशिष्टताओं के कारण हिन्दू-संस्कृति में अपना पूजनीय स्थान रखता है।

अमृत कुम्भोत्पत्ति -

सनातन परम्परा में कुम्भपर्व का समुद्र-मन्थन से उत्पन्न अमृतकुम्भ से सम्बन्ध माना जाता है। यद्यपि समुद्रमन्थन एवं अमृतकुम्भ की उत्पत्ति की कथा पुराणों एवं प्राचीन ग्रन्थों में है, तथापि चार स्थानों में कलश स्थापन या अमृतकलश के गिरने की कथा सर्वत्र प्राप्त नहीं होती। परम्परानुसार चार स्थानों में अमृत बूंद गिरने की कथा स्कन्द पुराण में है। तदनुसार भगवान् विष्णु की प्रेरणा से देव-दानवों ने मिलकर समुद्रमन्थन किया। इस मंथन में मन्दराचल को मंथन-दण्ड बनाया गया, वासुकि नाग को रस्सी, तथा भगवान् विष्णु कूर्मरूप में आधार बने। वासुकि नाग की पूंछ की ओर देवताओं ने और मुख की ओर दानवों ने पकड़कर मन्थन किया। मन्थन से कालकूट विष प्रकट हुआ जिसे भगवान् शंकर ने पान कर लोक की रक्षा की तथा स्वयं नीलकण्ठ बन गये। इस सन्दर्भ में परम्परा में उपलब्ध स्कन्द पुराणीय निम्न वचन द्रष्टव्य है-

''अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कलशोत्पत्तिमुत्तमाम्। उत्तरे हिमवत्पार्श्वे क्षीरोदो नाम सागरः ॥ आरब्धं मन्थनं तत्र देवैर्दानवपूर्वकैः। मन्थानं मन्दरं कृत्वा नेत्रं कृत्वा तु वासुकिम्॥ मूले कूर्मं तु संस्थाप्य विष्णोर्बाहू च मन्दरे। एकत्र देवताः सर्वे बलिमुख्यास्तथैकतः॥ मध्यमाने तदा तस्मिन् क्षीरोदे सागरोत्तमे। उत्पन्नं गरलं पूर्वं शम्भुना भक्षितं च तत्॥'' कालकूटविष के बाद पुनः मन्थन से पुष्पक विमान, ऐरावत हाथी, पारिजात वृक्ष, रम्भा, कौस्तुभमणि, बाल चन्द्र, कामधेनु, लक्ष्मी आदि रत्न निकले। जैसा कि कहा गया है-

अथ स्वास्थ्यं गते तस्मिन् क्षीरोदे सागरोत्तमे। उत्पन्नानि च रत्नानि यानि तत्र महान्ति च॥ विमानं पुष्पकं पूर्वमुत्तमं हंसवाहनम्। नाग ऐरावतश्चैव पादपः पारिजातकः॥ विपणावाद्यान्तरं चैव रम्भा नृत्यगुणान्विता। मणिरत्नं कौस्तुभाख्यं बालचन्द्रस्तथैव च। ॥ कुण्डलानि धनुश्चैव गावः शिवास्तथा। लक्ष्मीः सुरूपया यमुना सुशीला सुरभिस्तथा॥ उच्चैःश्रवाः समुत्पन्नो लक्ष्मीश्च वरवर्णिनी। तथा धन्वन्तरिर्देवो विश्वकर्मा कलाविदः॥

अन्तिम रत्न के रूप में धन्वन्तरि अमृत कुम्भ लेकर प्रकट हुए। कुम्भ सुधा से परिपूर्ण एवं अत्यन्त मनोहर था। जैसा कहा गया है–

कलशश्च समुद्भूतो धन्वन्तरिकरोल्लसन्। मुखान्तं सुधया पूर्णः सर्वेषां हि मनोहरः॥ अजितस्य पदाम्भोजकृपयैव समुद्गतम्। क्षीराब्धिसोनोद्भूतं कलशन्तेन्द्ररत्नकम्॥

अमृत कलश के निकलते ही देवप्रेरणा से इन्द्रपुत्र महाबली जयन्त कलश लेकर आकाश में भाग गया। तत्पश्चात् दैत्यगुरु शुक्राचार्य के आदेशानुसार दैत्यों ने अमृत वापिस लेने के लिए जयन्त का पीछा किया। जयन्त भी भयभीत होकर दिनभर भागता रहा। बाद में दैत्यों ने जयन्त के हाथ से अमृत कलश छीन लिया, उसके बाद जयन्त ने दैत्यों से छीन लिया। मैं पीऊंगा पहले, पहले मैं पीऊंगा, इस प्रकार बारह दिन परस्पर युद्ध (छीना–झपटी) चलता रहा। बाद में भगवान् ने मोहिनीरूप में आकर देवों को सुधापान कराया–

दृष्ट्वा तु तत्क्षणादेव महाबलपराक्रमः। जयन्तो मृतमादाय गतो देवप्रचोदितः॥ देवकर्म समालोच्य तदा दैत्यपुरोधसा। नागोच्छ्वासप्रव्यथिता दैत्याः शुक्रेण सूचिताः॥ जग्मुस्ते पृष्ठतो लग्ना भीतः सोपि पलायितः। दिशो दश दिवारात्रं द्वादशाहं प्रपीडितः॥ दैत्यैर्गृहीतः तद्धस्तात् तेनापि पुनरेव सः। अहं पिबेयं पूर्वं तु न त्वं चेति प्रचक्रधुः ॥ एवं विवदमानेषु काश्यपेषु सुधाग्रहे। भगवान् मोहयित्वा तान् मोहिन्या विभजत् सुधाम्॥

इस प्रकार देवों तथा दैत्यों के बारह दिन तक होने वाले विवाद में या छीना–झपटी में जहाँ–जहाँ कुम्भ या कुम्भ से अमृत के कुछ अंश गिरे वहाँ–वहाँ कुम्भ पर्व होता है–

विवादे काश्यपेयानां यत्र यत्रावनीस्थले ।
कलशो न्यपतत् तत्र कुम्भपर्व तदोच्यते ॥

अमृत कुम्भ को लेकर इस विवाद में दैत्यों ने कई बार कलश को गिरा दिया। उस समय कलश को गुरु ने दैत्यों के अपहरण से बचाया। चन्द्रमा ने प्रस्रवण (चूने) तथा सूर्य ने कलश को टूटने से बचाया। इसलिये इन तीनों ग्रहों की कुम्भपर्व में विशेष भूमिका मानी जाती है। इन ग्रहों की जिस स्थिति में जहाँ–जहाँ अमृतकलश गिरा या कुछ अमृत के अंश गिरे थे, वहाँ–वहाँ वैसी स्थिति या योग आने पर कुम्भ पर्व मनाया जाता है। कहा गया है–

गुर्विन्द्वकैः स्वपुत्रैश्च कुम्भोरक्षि निपातितः। कलहाक्रान्तचेतोभिर्दैत्यैः शुक्रप्रचोदितः॥ चन्द्रः प्रस्रवणात् रक्षां सूर्यो विस्फोटनाद् दधौ। दैत्येभ्यश्च गुरू

रक्षां शौरिदेवेन्द्रजाद् भयात्। सूर्येन्दुगुरुसंयोगस्तद्राशौ यत्र वत्सरे। सुधाकुम्भप्लवे भूमौ कुम्भो भवति नान्यथा ।।

अमृत कुम्भ की प्राप्ति हेतु दैत्यों से देवों का बारह दिन तक युद्ध हुआ था। देवों का एक दिन मनुष्यों के एक वर्ष के बराबर होता है अर्थात् मनुष्यों का एक वर्ष देवों का एक दिन होता है। इसलिये देवताओं के बारह दिन मनुष्यों के लिए बारह वर्ष के बराबर हैं। इसलिये प्रायः बारह वर्ष में कुम्भ पर्व आयोजित होता है। एक स्थान पर प्रायः बारह वर्ष के बाद कुम्भ योग बनता है। प्रायः इसलिये कि बारह राशियों के भ्रमण में सूर्य को लगभग ३६५ दिन लगते हैं तथा गुरु को एक राशि के भ्रमण में लगभग ३६१ दिन लगते हैं। इस प्रकार १२ वर्षों में सूर्य एवं गुरु के दिनों में लगभग ४८ दिन का अन्तर हो जाता है। यह अन्तर प्रति बारह वर्ष पर बढ़ता हुआ सातवें कुम्भ के बाद आठवें कुम्भ के समय लगभग एक वर्ष का हो जाता है, इसलिये प्रायः ८वां कुम्भ ११ वर्ष पर होता हैं। अर्थात् १०० वर्ष में एक कुम्भ ११ वर्ष पर होगा, शेष १२ वर्ष पर होंगे। कहा गया है–

देवानां द्वादशाहोभिर्मर्त्यद्वादशवत्सरैः। जायन्ते कुम्भपर्वाणि.........

कुम्भ भेद या संख्या–

अमृत कुम्भ की प्राप्ति के लिए देव–दैत्यों में बारह दिन (मनुष्यों के १२ वर्ष) तक युद्ध हुआ था, इस बारह दिन के युद्ध में अमृत कुम्भ बारह जगह गिरा था, या रखा गया था, या अमृत के अंश गिरे थे। प्रचलित परम्परा एवं स्कन्द पुराणादि के अनुसार पृथ्वी में चार जगह एवं अन्य लोकों में आठ जगह अमृत गिरा था। अतः स्थान भेद से १२ कुम्भ पर्व होते है। इनमें चार कुम्भ पर्व पृथ्वी पर मनुष्यों के लिए होते है, जिनमें देवगण भी किसी न किसी रूप में सम्मलित होते है। और आठ कुम्भ अन्य लोकों में होते है, जिनमें केवल देवगण ही भाग लेते है, अन्य कोई भाग नहीं ले सकता। कहा गया है–

जायन्ते कुम्भपर्वाणि तथा द्वादशसंख्यया।
तत्राघनुत्तये नृणां चत्वारो भुवि भारते ।।
अष्टौ लोकान्तरे प्रोक्ता देवैर्गम्या न चेतरैः ।।

चूँकि पृथिवी पर अमृत कलश या अमृत के कुछ अंश चार स्थानों में गिरे थे इसलिए पृथिवी पर चार कुम्भ (प्रति बारह वर्ष में) होते हैं। कहा गया है–

पृथिव्यां कुम्भयोगस्य चतुर्धा भेद उच्यते।

चतु:स्थले च पतनात् सुधाकुम्भस्य भूतले।।

ये चार कुम्भ कहाँ–कहाँ होते हैं अर्थात् कहाँ–कहाँ सुधा कलश या अमृत गिरा था–इसके लिए कहा गया है–

विष्णुद्वारे तीर्थराजेऽवन्त्यां गोदावरीतटे।
सुधाबिन्दुविनिक्षेपात् कुम्भपर्वेति विश्रुतम् ।।

अर्थात् अमृत की बूंदे विष्णुद्वार (हरिद्वार), तीर्थराज प्रयाग, अवन्ती (उज्जैन) तथा गोदावरी तट (नासिक) में गिरी थीं। इसलिए धरती पर इन चार स्थानों पर कुम्भपर्व होता है।

पृथ्वी पर १२ या १४ कुम्भ–

कुछ विद्वान् रुद्रयामलोक्तामृतीकरणप्रयोग ग्रन्थ के अनुसार पृथ्वी पर १२ कुम्भपर्व मानते हैं तथा एतदर्थ १५५ श्लोकात्मक शिवपार्वती संवाद रूप उक्त ग्रन्थ के निम्न वचन प्रमाणरूप में प्रस्तुत करते हैं–

''नद्यास्तीरं समाश्रित्य स्नानं कुयाद्विचक्षण:। अस्मिन्नमृतयोगे तु स्नात्वा तीर्थे महत्फलम्।। गुरोरपि यदा योगस्तस्य पुण्यं न वर्ण्यते। मासं यावद्भवेत् तीर्थे तदामृतमयं शुभे। ।। देवाश्चागत्य मज्जन्ति तत्र मासं वसन्ति च। तस्मिन्स्नानेन दानेन पुण्यमक्षय्यमाप्नुयात्। सिंहे युतौ च रेवायां मिथुने पुरुषोत्तमे। मीनभे ब्रह्मपुत्रे च तव क्षेत्रे वरानने ।। धनुराशिस्थिते भानौ गङ्गासागरसंगमे। कुम्भराशौ च कावेर्यां तुलार्के शाल्मलीवने।। वृश्चिकके ब्रह्मसरसि कर्कटे कृष्णशासने। कन्यायां दक्षिणे सिन्धौ यत्राहं रामपूजित: ।। अथाप्यन्योऽपि योगोऽस्ति यत्र स्नानं सुधोपमम्। मेषराशिस्थिते भानौ कुम्भे चैव गुरौ स्थिते । गङ्गाद्वारे भवेद् योगो भुक्तिमुक्तिप्रद: शिवे। मेषे गुरौ तथा देवि मकरस्थे दिवाकरे । त्रिवेण्यां जायते योग: सद्योऽमृतफलं लभेत्। शिप्रायां मेषगे सूर्ये सिंहस्थे च बृहस्पतौ।। मासं यावन्नर: स्थित्वामृतत्वं यान्ति दुर्लभम् ।। (श्लो. ११६–१२८)

इन वचनों के अनुसार । श्रावण में (कर्क संक्रान्ति अर्थात् कर्क राशि में सूर्य के आने पर) द्वारका में, २– भाद्रपद (सिंह संक्रान्ति) में नासिक में, ३ आश्विन (कन्या संक्रान्ति) में रामेश्वर में, ४–कार्तिक (तुला संक्रान्ति) में सिमरिया में (शाल्मली वन में), ५– मार्गशीर्ष (वृश्चिक संक्रान्ति) में कुरुक्षेत्र मे, ६– पौष (धनु संक्रान्ति) में गंगासागर में, ७– माघ (मकर संक्रान्ति) में प्रयागराज में, ८– फाल्गुन (कुम्भ

संक्रान्ति) में कुम्भकोणम् तमिलनाडु में, ९- चैत्र (मीन संक्रान्ति) में ब्रह्म पुत्र, कामाख्या, गोहाटी में, १०- चैत्र/वैशाख (मेष संक्रान्ति) में हरिद्वार/उज्जैन (गुरु के कुम्भ राशि में रहने पर हरिद्वार एवं सिंह राशि में रहने पर उज्जैन) में, ११ ज्येष्ठ (वृष संक्रान्ति) में बदरीनाथ में तथा १२ आषाढ़ (मिथुन संक्रान्ति) में जगन्नाथपुरी में कुम्भपर्व योग की प्रतीति हो रही है। इस सन्दर्भ में

तुलायां चैव चन्द्रे हि समुद्रमन्थनात् पुरा। कुम्भो व्यजायत प्रोतः सुधयामर्त्यसाधकः॥ कुत्रेदं शाल्मलीतीर्थं यत्रामृतघटः पुरा। दैत्यैः संस्थापितः पूर्वं देवमायाविमोहितैः ॥

इत्यादि वचन भी द्रष्टव्य हैं। इसी प्रकार एक वचन मिलता है-

कुम्भराशिस्थिते भानौ तत्रैव च स्थिते गुरौ।
वृन्दावने भवेत् कुम्भो वैष्णवानां समागतः ॥

तदनुसार कुम्भराशि पर सूर्य एवं गुरु के आने पर वृन्दावन में वैष्णवों का कुम्भ होता है। इस प्रकार १३ कुम्भ हो गये। इसी प्रकार छत्तीसगढ़ में महानदी के रागिम गांव में माघपूर्णिमा को कुम्भ पर्व आयोजित होता है। दक्षिण अमेरिका में सूरी नामक नदी तट पर भी कुम्भ पर्व आयोजित हो चुका है। इस प्रकार और भी अनेक कुम्भ योग प्राप्त हो सकते हैं। वस्तुतः जगद्गुरु आदि शंकराचार्य या उनसे भी पूर्व से लेकर सुरेश्वराचार्य, रामानन्दाचार्य, मधुसूदन सरस्वती आदि समस्त कुम्भ-अखाड़ा आदि के संस्थापक/व्यवस्थापक पूर्व आचार्यों ने चार ही जगह कुम्भपर्व आयोजन की परम्परा व व्यवस्था बनायी है। रुद्रयामलोक्तामृतीकरणप्रयोग के वचनों से उन-उन राशियों में सूर्य के रहने पर उन-उन तीर्थों में स्नानादि का विशेष महत्त्व स्पष्ट प्रतिपादित है, तदनुसार गंगासागर आदि तीर्थों में प्रतिवर्ष स्नानादि मेला आयोजित भी होता है। गुरु के आने पर फलातिशय भी है, तथापि कुम्भयोग या कुम्भपर्व या कुम्भ शब्द जैसे हरिद्वारादि के लिय **''गङ्गाद्वारे भवेद् योगः कुम्भनामा तदोत्तमः''**कुम्भ शब्द का प्रयोग मिलता है, उस प्रकार का प्रयोग दृष्टिगोचर नहीं है। साथ ही **''पृथिव्यां कुम्भयोगस्य चतुर्धा भेद उच्यते। चत्वारो भुवि भारते। अष्टौ लोकान्तरे प्रोक्ता देवैर्गम्या न चेतरैः''** इत्यादि वचनों से विरोध भी हो रहा है। रुद्रयामलोक्तामृतीकरणप्रयोग नामक तान्त्रिक ग्रन्थ भी सन् २०११ में प्रथमतः प्रकाश में आया है। कुम्भपर्व १२ हैं इसमें कोई मतभेद नहीं है, पर बारह कुम्भ पृथिवी पर हैं इसमें मतभेद है। और भी कई बातें हैं जिनकी चर्चा यहां सम्भव नहीं है। निष्कर्ष रूप

में यही कहा जा सकता है कि उक्त १२ कुम्भपर्व पृथिवी पर होते हैं– इसको सुनिश्चित व सिद्ध करने के लिये और साक्ष्य एवं अनुसन्धान की आवश्यकता है। वर्तमान में हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन एवं नासिक इन चार स्थानों पर कुम्भपर्व का आयोजन होता है।

कुम्भयोग एवं महत्त्व–

हरिद्वार कुम्भ योग के बारे में कृत्यमंजरी में कहा है–

''पद्मिनीनायके मेषे कुम्भराशिगते गुरौ। गङ्गाद्वारे भवेद् योगः कुम्भनामा तदोत्तमः।।''

अर्थात् जब सूर्य मेष राशि में और गुरु कुम्भ राशि में होते हैं तो गंगाद्वार अर्थात् हरिद्वार में कुम्भनामक उत्तम योग होता है। अन्यत्र भी कहा है–

वसन्ते विषुवे चैव घटे देवपुरोहिते।
गङ्गाद्वारे च कुम्भाख्यः सुधामेति नरो यतः।।

भक्ति, ज्ञान एवं वैराग्य की नर्तनभूमि देवभूमि हरिद्वार का महत्त्व अनेक पुराणों एवं प्राचीन आर्ष ग्रन्थों में प्रतिपादित है जो अलग से स्वतन्त्र लेख का विषय है। ''स्वर्गद्वारेण तत् तुल्यं गङ्गाद्वारं न संशयः'' अर्थात् स्वर्गद्वार से तुलना करते हुए कहा गया है–

''धन्यानां पुरुषाणां हि गङ्गाद्वारस्य दर्शनम्। विशेषतस्तु मेषार्के संक्रमेऽतीव पुण्यदे।। तिस्रः कोटयोऽर्धकोटी च तीर्थानां मुनिसत्तम। भजन्ते सन्निधिं तत्र स्नातः सर्वत्र जायते ।।''

सकृत् स्नातं तु यैर्मर्त्यैर्गङ्गाद्वारे शुभावहे।
न तेषां पुनरावृत्तिः कल्पकोटिशतैरपि ।।
गङ्गाद्वारसमं तीर्थं न कैलाससमो गिरिः।।

इत्यादि। अर्थात् पुण्यात्मा को ही हरिद्वार का दर्शन प्राप्त होता है। वैशाखी पर दर्शन और पुण्यप्रद एवं दुर्लभ है। साढ़े तीन करोड़ तीर्थ हरिद्वार के सान्निध्य का सेवन करते हैं। एक बार हरिद्वार में जिसने स्नान कर लिया मानों उसने साढ़े तीन करोड़ तीर्थों में स्नान कर लिया। उसकी पुनरावृत्ति नहीं होती है। हरिद्वार के समान तीर्थ एवं कैलास के समान पर्वत दूसरा कहीं नहीं है। और वहां कुम्भयोग मिल जाय तो उसका माहात्म्य चतुर्मुख बह्मा जी भी नहीं बता सकते। कहा है–

कुम्भराशिगते जीवे यद्दिने मेषगो रविः। हरिद्वारे कृतं स्नानं पुनरावृत्तिवर्जनम्।। लोके कुम्भ इति ख्यातो जानीयात्सर्वकामदः। गङ्गायां स्नानमाहात्म्यं नालं वक्तुं चतुर्मुखः।।

हजारों अश्वमेध, सैकड़ों वाजपेय यज्ञ एवं लाख बार भूमि की परिक्रमा का जो फल है वह कुम्भ स्नान से प्राप्त हो जाता है। कुम्भ में स्नान करने वाले को देवता भी नमस्कार करते हैं, ऐसा कहा गया है–

''अश्वमेधसहस्त्राणि वाजपेयशतानि च। लक्षं प्रदक्षिणा भूमेः कुम्भस्नानेन तत्फलम्।। सहस्रं कार्तिके स्नानं माघे स्नानशतानि च। वैशाखे नर्मदा कोटिः कुम्भस्नानेन तत्फलम्।। तान्येति यः पुमान् योगे सोमृतत्त्वाय कल्पते। देवा नमन्ति तत्रस्थान् यथा रङ्का धनाधिपान्।।''

इसी प्रकार प्रयाग के लिये कहा गया है–

वृषराशिं गते जीवे मकरे चन्द्रभास्करौ। अमावस्या तदा योगः कुम्भाख्यस्तीर्थनायके।। मकरे च दिवानाथे ह्यजगे च बृहस्पतौ। कुम्भयोगो भवेत्तत्र प्रयागे ह्यतिदुर्लभः।। माघामायां मृगे भानौ वृषराशिगते गुरौ। कुम्भयोगो भवेत् तत्र प्रयागे त्वतिदुर्लभः।।

इत्यादि। अर्थात् वृष राशि में गुरु हों, मकर में सूर्य एवं चन्द्रमा हो तथा अमावस्या तिथि हो तो प्रयागराज में कुम्भयोग होता है। इसी प्रकार ''कुशस्थलीमहाक्षेत्रम् ..... धारायां च तदा कुम्भो जायते खलु मुक्तिदः'' इत्यादि वचनों के अनुसार सिंहस्थ गुरु एवं मेषस्थ सूर्य होने पर उज्जैन में तथा **''गोदावर्यां तदा कुम्भो जायतेऽवनीमण्डले''** इत्यादि वचनों के अनुसार सिंह राशि में गुरु (कहीं–कहीं कर्क राशि में गुरु के होने पर नासिक में कुम्भ योग का उल्लेख मिलता है। कहा गया है– **''कर्के गुरुस्तथा भानुश्चन्द्रश्चन्द्रक्षयस्तथा। गोदावर्यां तदा कुम्भः ....''**। तथापि वर्तमान में सिंहस्थ में ही होता है) एवं सूर्य के होने पर नासिक में कुम्भ होता है।

उपसंहार–

कुम्भ का न केवल धार्मिक दृष्टि से ही महत्त्व है, अपितु आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, दार्शनिक, आर्थिक आदि कई दृष्टियों से इसका महत्त्व है। धर्म की रक्षा, धर्मावलम्बियों को संगठित करना, सामाजिक बुराइयों को दूर करना, धर्म का प्रचारादि करना, शास्त्रचिन्तन परम्परादि को प्रोत्साहित करना, मठ–मन्दिर आदि संस्थाओं का संचालन करना– ये सब उद्देश्य रहे हैं इसके। यहां सामान्य दृष्टि से धार्मिक पक्ष का निदर्शन मात्र किया गया है। लेख में उल्लिखित एक–एक बिन्दु पर अनुसंधानात्मक लेख/पुस्तक की अपेक्षा है। शम्

■

महाकुम्भ स्नान की वैज्ञानिकता

*डॉ. विपिन कुमार झा[१]
डॉ. दीपिका दीक्षित[२]

सारांश– वस्तुतः हम महाकुम्भ स्नान की वैज्ञानिकता को इस तरह स्पष्ट कर सकते है।

व्यवहार में देखा जाता है कि सूर्य की प्रातःकालीन गर्मी अर्थात् इन्फ्रारेज सन्दर्भित ऊर्जा से विभिन्न प्रकार के शारीरिक एवं मानसिक रोगों का निदान होता है। वस्तुतः यह ऊर्जा ही अमृत है क्योंकि अमृत का कार्य व्यक्ति को शारीरिक एवं मानसिक संचार को सुगम एवं सक्रिय कर आनन्दातिरेक करना है। ऊर्जा ही हमारे जीवन का आधार होता है। इसी तरह जब अलग अलग समय में अलग-अलग नक्षत्रों एवं ग्रहों के संक्रमण के समय विशेष ऊर्जा निश्चित स्थान पर उपलब्ध होती है। यह ऊर्जा ब्लैक बॉडी अर्थात् पृथ्वी की ओर जाती है क्योंकि कार्बन की मात्रा की अधिकता के कारण उसको अवशोषित कर लिया जाता है एवं प्रत्यावर्तन नहीं किया जाता है।

इसी तरह जब कुंभ के समय में एक विशेष योग में जब विशेष स्थल पर इस तरह के योग बनते हैं तो वहाँ पर ऊर्जा का अर्थात् इन्फ्रारेड का संचार इतना अधिक होता है कि वह विशेष स्थल कुम्भ हेतु उपयुक्त माना जाता है। कुंभ, पूर्ण-कुंभ एवं महाकुंभ इसी आधार पर निर्धारित किया गया है।

कुम्भ के ये अमृत अर्थात् ऊर्जा वहाँ उपस्थित व्यक्तियों को लाभान्वित करती है, उन्हें स्फूर्ति देती है। उन्हें सक्रिय बनाती है। एतत्काल में उस स्थान विशेष पर स्नान करने वाला जनसमुदाय आनंद को प्राप्त करता है, यह भी सस्टेनेबल अर्थात् स्थिर होता है, ड्यूरेबल अर्थात दीर्घकालिक होता है। इस तरह का जो उसका आनंद होता है उससे वह प्रसन्नचित्त होता है, अपने मानसिक, शारीरिक, समस्याओं से मुक्त होता है। एक तरफ तो पवित्र नदी जल के औषधीय गुणों का सेवन उसके साथ साथ इस तरह की ऊर्जा की प्राप्ति उसके जीवन को पूर्ण रूप से अमृतमय बनाता है, ऊर्जामय बनाता है, आनंदमय बनाता है। भारतीय परंपरा में कुंभ को इस तरह से प्रस्तुत किया गया है, जिससे अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग समय में इस तरह की यह ऊर्जा व्यक्ति को प्राप्त होगी।

यदि व्यक्ति भिन्न-भिन्न कुंभ में स्नान करता है तो वह आनंदमय हो जाता है। वह

* [१]संस्कृत एवं प्राच्यअध्ययन विभाग बाबा भीम राव अम्बेडकर वि.वि. लखनऊ
[२]भारतीय ज्ञान परम्परा विभाग, के.सं.वि.वि. लखनऊ

ऊर्जावान हो जाता है। वह चिर–युवा रहता है, राष्ट्र के उत्कर्ष के लिए, राष्ट्र के संवर्धन के लिए निरंतर अग्रिम पंक्ति में रहता है और भारतीय संस्कृति का संवाहक बना रहता है।

==

''कुं कुत्सितम् उम्भयति दूरीकरोतीति कुम्भम्''। जो कुत्सित, कलुषित अर्थात् पापमय विचारों को दूर करे ऐसे ऊर्जारूप अमृततत्व अमृतकुम्भ या कुम्भ के रूप में प्रथित है।

''कुं कुत्सितम् उम्भयति दूरीकरोतीति कुम्भम्''। जो कुत्सित, कलुषित अर्थात् पापमय विचारों को दूर करे ऐसे ऊर्जारूप अमृततत्व अमृतकुम्भ या कुम्भ के रूप में प्रथित है। कुम्भ की वैज्ञानिकता एक आख्यान द्वारा जनमानस में व्याप्त है। पुराणों के अनुसार, समुद्र मंथन के दौरान भगवान् धन्वंतरि अमृत कुंभ लेकर आए थे, तब देवताओं और दानवों के बीच अमृत प्राप्ति को लेकर संघर्ष छिड़ गया। भगवान् विष्णु ने इस संघर्ष को रोकने और अमृत को सुरक्षित रखने के लिए मोहिनी का रूप धारण किया। उन्होंने अमृत कलश को सुरक्षित रखने के लिए इंद्रदेव के पुत्र जयंत को सौंपा। जयंत अमृत कुंभ को लेकर आकाश मार्ग से चले, लेकिन दानवों ने उनका पीछा किया।

इस क्रम में अमृत की कुछ बूंदें पृथ्वी पर गिर गईं। ये बूंदें प्रयागराज में गंगा–यमुना–सरस्वती के संगम पर, हरिद्वार में गंगा नदी में, उज्जैन में क्षिप्रा नदी में और नासिक में गोदावरी नदी में गिरीं। इन्हीं स्थानों पर कुंभ मेले की परंपरा शुरू हुई।

वस्तुतः हम महाकुम्भ स्नान की वैज्ञानिकता को इस तरह स्पष्ट कर सकते है

व्यवहार में देखा जाता है कि सूर्य की प्रातःकालीन गर्मी अर्थात् इन्फ्रारेज सन्दर्भित ऊर्जा से विभिन्न प्रकार के शारीरिक एवं मानसिक रोगों का निदान होता है। वस्तुतः यह ऊर्जा ही अमृत है क्योंकि अमृत का कार्य व्यक्ति को शारीरिक एवं मानसिक संचार को सुगम एवं सक्रिय कर आनन्दातिरेक करना है। ऊर्जा ही हमारे जीवन का आधार होता है। इसी तरह जब अलग अलग समय में अलग–अलग नक्षत्रों एवं ग्रहों के संक्रमण के समय विशेष ऊर्जा निश्चित स्थान पर उपलब्ध होती है। यह ऊर्जा ब्लैक बॉडी अर्थात पृथ्वी की ओर जाती है क्योंकि कार्बन की मात्रा की अधिकता के कारण उसको अवशोषित कर लिया जाता है एवं प्रत्यावर्तन नहीं किया जाता है।

इसी तरह जब कुंभ के समय में एक विशेष योग में जब विशेष स्थल पर इस तरह के

योग बनते हैं तो वहाँ पर ऊर्जा का अर्थात् इन्फ्रारेड का संचार इतना अधिक होता है कि वह विशेष स्थल कुम्भ हेतु उपयुक्त माना जाता है। कुंभ, पूर्ण–कुंभ एवं महाकुंभ इसी आधार पर निर्धारित किया गया है।

कुम्भ के ये अमृत अर्थात् ऊर्जा वहाँ उपस्थित व्यक्तियों को लाभान्वित करती है, उन्हें स्फूर्ति देती है। उन्हें सक्रिय बनाती है। एतत्काल में उस स्थान विशेष पर स्नान करने वाला जनसमुदाय आनंद को प्राप्त करता है, यह भी सस्टेनेबल अर्थात् स्थिर होता है, ड्यूरेबल अर्थात् दीर्घकालिक होता है। इस तरह का जो उसका आनंद होता है उससे वह प्रसन्नचित्त होता है, अपने मानसिक, शारीरिक, समस्याओं से मुक्त होता है। एक तरफ तो पवित्र नदी जल के औषधीय गुणों का सेवन उसके साथ साथ इस तरह की ऊर्जा की प्राप्ति उसके जीवन को पूर्ण रूप से अमृतमय बनाता है, ऊर्जामय बनाता है, आनंदमय बनाता है। भारतीय परंपरा में कुंभ को इस तरह से प्रस्तुत किया गया है, जिससे अलग–अलग स्थानों पर अलग–अलग समय में इस तरह की यह ऊर्जा व्यक्ति को प्राप्त होगी।

यदि व्यक्ति भिन्न–भिन्न कुंभ में स्नान करता है तो वह आनंदमय हो जाता है। वह ऊर्जावान हो जाता है। वह चिर–युवा रहता है, राष्ट्र के उत्कर्ष के लिए, राष्ट्र के संवर्धन के लिए निरंतर अग्रिम पंक्ति में रहता है और भारतीय संस्कृति का संवाहक बना रहता है।

भारतीय परंपरा के अनुसार मानव जीवन के कुछ व्यवस्थित एवं समाज को सुसंगठित रखने के लिए अनेक उपक्रम प्रस्तुत किए गए हैं। मनुष्य विभिन्न प्रकार के दुःखों से पीड़ित होकर मुक्ति चाहता है। वह निरंतर अपने सुख, शांति, ऐश्वर्य हेतु निरंतर संलग्न रहता है। अपने परम पुरुषार्थ को प्राप्त करने के लिए एवं अपने स्वरूप को जानने के लिए अनेक साधन बताए गए हैं। इसमें तीर्थ यात्रा, गंगा–स्नान आदि भी महत्वपूर्ण है। इन सभी संदर्भों में महाकुंभ का महत्व अत्यंत ही महनीय हो जाता है। कुंभ महापर्व अनादि और ऐतिहासिक है। सृष्टि के आदि में सृष्टिकर्ता भगवान् ब्रह्मा ने कश्यप दक्ष आदि को मन में संकल्प से उत्पन्न किया। इन मानसिक पुत्रों से आदेश दिया कि तुम लोग सृष्टि की बुद्धि करो। दक्ष प्रजापति की अनेक कन्याएं थीं। उन्होंने कश्यप आदि प्रजापति के साथ उनका विवाह कर दिया। कश्यप की दिति तथा अदिति नामक पत्नी थी। दिति से दैत्य उत्पन्न हुए तथा अदिति से देवता, देवताओं को स्वर्ग का स्वामी तथा दैत्यों को पाताल का स्वामी बना दिया। दैत्य इससे भी प्रसन्न न

हुए, वह वह स्वर्ग का राज्य चाहते थे। दैत्यों ने तपस्या कर तथा भौतिक बल अर्जित कर देवताओं से स्वर्ग का राज्य छीन लिया। देवता राज्य भ्रष्ट हो गए। वह भगवान् विष्णु की शरण में आए। भगवान ने उन्हें उपाय बतलाया कि दैत्यों से संधि करो। उन्हें साथ लेकर अमृत के लिए समुद्र मंथन करो। देवताओं ने यही किया। दैत्य समुद्र मंथन के लिए तैयार हो गए। सुमेरु पर्वत को मथनी और वासुकी नाग को रस्सी बनाई गई। स्वयं भगवान् कच्छप का रूप धारण करके समुद्र में अपनी पीठ पर सुमेरु पर्वत को धारण किए।

समुद्र मंथन में अनेक वस्तुएं निकली। उन्होंने उन्हें देवता और दैत्यों को देते गए। फिर अमृत कुंभ निकला उन्हें देवता और दैत्य दोनों लेना चाहते थे। इस पर दोनों में विवाद हो गया। कोई अमृत कुंभ लेता तो कोई दूसरा खींचता। इस प्रकार बारह दिव्य दिनों तक छीना झपटी चली। देवताओं का एक दिन मनुष्य के लिए एक वर्ष के बराबर होता है। अतः विवाद 12 वर्ष तक चला।

इसमें श्लोक प्रमाण है– कश्यप पुत्र देव–दानव दोनों ने अमृत कलश के विवाद में जहां–जहां भूमि पर कलश रखा वहां वहां कुंभ पर्व होता है। दोनों के युद्ध से अमृत कुंभ की रक्षा चंद्र, सूर्य, बृहस्पति और भगवान् विष्णु ने की। जिस राशि में सूर्य चंद्र तथा गुरु का संयोग था, उसी प्रकार यह योग 12 वर्षों में होता है

प्रथम चार कुंभ मनुष्य के पाप नाश के लिए भारत भूमि में होते हैं। आठ अन्य लोको में कहे गए हैं वहां देवता ही जा सकते हैं कोई अन्य नहीं। चार कुंभ अलग–अलग स्थलों पर होता है। भारत भूमि में अमृत कुंभ रखने का चार स्थान है। हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन और गोदावरी तट पर नासिक में कुंभ होते हैं। जो लोग कुंभ पर्व पर स्नान करते हैं, वह देव लोक को प्राप्त करते हैं। अमृत तत्व को प्राप्त करने की योग्यता रखते हैं।

१. पुण्यकाल संक्रांति में हरिद्वार में उत्तम कुंभ का योग होता है।

२. मकर राशि के सूर्य, वृष राशि में स्थित बृहस्पति और माघ मास की अमावस्या होने पर प्रयाग में कुम्भ होता है।

३. जब बृहस्पति, सूर्य और चंद्र सिंह राशि में हो, अमावस्या तिथि हो तो उज्जैन में क्षिप्रा के तट पर मुक्तिदाता कुम्भ होता है।

४. जब कर्क राशि में बृहस्पति और चंद्रमा हो अमावस्या तिथि हो तो भूमंडल पर गोदावरी में कुंभ होता है।

इस वर्ष 13 फरवरी से लेकर 26 फरवरी तक महाकुंभ का आयोजन किया जा रहा है। जिसमें आध्यात्मिक शुद्ध सांस्कृतिक उत्सव एकता के रूप में प्रकृति के रूप में लाखों तीर्थयात्री गंगा में गंगा यमुना और सरस्वती के संगम में प्रयागराज में स्नान करेंगे। यह कुंभ पद अमृत का प्रतीक है। अमृतघट संदर्भित होने के कारण इसको कुंभ कहा जाता है। यह १२ वर्षों पर लगता है इसी कारण से इसको महाकुंभ कहा जाता है। ६ वर्षों पर यह अर्ध कुंभ के रूप में दृष्टिगत होता है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

महाकुंभ मेला १४४ वर्षों के बाद प्रयागराज में मनाया जाता है यदि इसके ऐतिहासिक विकास की बात किया जाए तो उसके पृष्ठभूमि में आदि शंकराचार्य द्वारा रचित पौराणिक संदर्भों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि राक्षसों और देवताओं के बीच अमृत के घट को लेकर के जो संघर्ष हुआ, भगवान् विष्णु ने मोहिनी रूप धारण करके जो इस घट को बचाया, इस आधार पर यह कुंभ आयोजित किया जाता है। इसके साथ ही साथ अगर ऐतिहासिक दृष्टि की बात करें तो चौथी शताब्दी ईसा पूर्व से छठी शताब्दी ईस्वी तक के दौरान कुंभ मेला का शुरुआत महाद्वीपीय तीर्थ यात्रियों की एक छोटे-छोटे आयोजन के रूप में दिखाई पड़ता है। यह हिंदू धर्म के विस्तार के साथ ही साथ गुप्त राजा शासको के द्वारा इसको विशेष ध्यान दिया गया। मध्यकाल में विजयनगर साम्राज्य और दलाल सल्तनत मुगल शासक जैसे राजाओं के द्वारा इसको समर्थन मिला, अकबर की धार्मिक सहिष्णुता के कारण वश में १५६५ नागा साधुओं को नेतृत्व करने का दायित्व दिया गया, इसी तरह पुष्यमित्र सुंग और राजा हर्षवर्धन के समय में प्रयागराज में कुंभ मेला का आयोजन प्रारंभ किया गया औपनिवेशिक काल में कुंभ मेला की विविधता से प्रभावित होकर ब्रिटिश शासको ने इसको दस्तावेजी करण किया, १९वीं शताब्दी में जेम्स प्रिंस ने इसे अनुष्ठानिक प्रथा के रूप में इसको वर्णित किया है, इसके साथ ही साथ विविध रूपों में यह निरंतर आगे बढ़ता रहा। २०१७ में यूनेस्को द्वारा इस प्राचीन परंपराओं के लिए मानव की अमृत संस्कृति विरासत के रूप में इसको मान्यता दी गई, कुंभ में २०१९ के तीन एवार्ड गिनीज बुक रहे। सबसे बड़ी यातायात और भीड़ प्रबंधन की योजना टेंट माय सिटी योजना सबसे बड़ा स्वच्छ अनुष्ठान

कुंभ का महत्व आध्यात्मिक सांस्कृतिक और और शास्त्रीय दृष्टि से देखा जा सकता है। आध्यात्मिक दृष्टि से ऐसा माना जाता है कि गंगा यमुना सरस्वती के पवित्र जल

में स्नान करने से मुक्ति प्राप्ति होती है। सांस्कृतिक दृष्टि से यह देखा जा सकता है कि कीर्तन भजन नृत्य आदि पारंपरिक नृत्य आध्यात्मिक एकता एवं अद्वितीयता का प्रतीक भारतवर्ष को एक सूत्र में बांधता है। ज्योतिष शास्त्रीय दृष्टि से सूर्य चंद्रमा और बृहस्पति की स्थितियों के आधार पर यह आयोजन किया जाता है जो अत्यंत शुभ है। यह राजस्थान अलग-अलग स्थान के रूप में होता है, राज्य योगराज योगी स्नान के रूप में जो पूर्व में शाही स्नान के रूप में कहा जाता था, ऐसे मेले की शुरुआत होती है। इसमें अखाड़ा जिसकी उत्पत्ति अखंड शब्द से हुई है अर्थात् जिसका अर्थ होता है अविभाज्य आदि शंकराचार्य ने सनातन जीवन शैली की रक्षा के लिए महत्वपूर्ण संपूर्ण भारतवर्ष को एकजुट करने का प्रयास किया था, इसके साथ ही साथ अखाड़े सामाजिक व्यवस्था सांस्कृतिक नैतिकता के भी प्रतीक होते हैं जो अलग-अलग आयोजन के रूप में हम देखते हैं जैसे वैष्णव अखाड़ा, उदासीन अखाड़ा इसी तरह पेशवाय जुलूस के रूप में भी हमें दिखाई पड़ता है जिसमें अश्व आदि के माध्यम से स्नान में सहभागी होते हैं आध्यात्मिक प्रवचनों का यहां पर कार्यक्रम दिखाई पड़ता है जिसमें जिसके साथ ही साथ संगीत नृत्य आदि भी वहां पर आयोजित की जाती है। यूनेस्को के द्वारा सांस्कृतिक विरासत की विविधता प्रदर्शित करने की दृष्टि से इसको यूनेस्को में स्थान दिया गया, यह सूची २००८ में स्थापित की गई और अमूर्त सांस्कृतिक विरासत की सुरक्षा के लिए इसको स्थान दिया गया, यूनेस्को ने जिस आधार पर इसको आसान अमूर्त सांस्कृतिक विरासत का नाम दिया उसमें मूल रूप से मौखिक परंपराएं कला प्रदर्शन सामाजिक प्रथाएं अनुष्ठान एवं उत्सव तथा कार्यक्रम प्रकृति एवं ब्रह्मांड से संदर्भित ज्ञान और अभ्यास को विशेष महत्व दिया गया जिसमें की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत प्रथाएं जो अभिव्यक्ति एवं ज्ञान कौशल पर आधारित होती है इस रूप में इसे विशेष महत्व दिया गया है

संस्कृतसाहित्ये कुम्भदर्शनस्य उल्लेखः बहुषु ग्रन्थेषु दृश्यते। एषः उल्लेखः मुख्यतया पुराणेषु, काव्येषु च विशेषमहत्त्वं वहति। एतेषु कतिपयानि उद्धरणानि अत्र प्रदत्तानि सन्ति-

१. स्कन्दपुराणे

स्कन्दपुराणस्य प्रयागमाहात्म्ये कुम्भस्नानस्य माहात्म्यं एवं वर्ण्यते-

''माघमासे गता गङ्गा यत्र गच्छति वारिणा।

तत्र स्नात्वा नरः सद्यः पुनरावृत्तिदुर्लभः॥''

(स्कन्दपुराण, प्रयागमाहात्म्य)

अत्र प्रयागे गङ्गायाः संगमे कुम्भस्नानस्य मोक्षदायकत्वं प्रतिपाद्यते।

२. भागवतपुराणे

समुद्रमन्थनकथायां कुम्भस्य उत्पत्तिं तथा अमृतस्य चौर्यं असुरैः तथा देवैः वर्ण्यते–

''ततोऽमृतं हरिः कृष्णः कुम्भे कृत्वा स्वधिष्ठितः।
प्रायादरुणिमं काले सुरासुरविमोहकृत॥''

(भागवतपुराण, ८.९.२४)

अत्र विष्णुना अमृतकुम्भस्य संरक्षणं वर्णितम्।

३. रामायणे

वाल्मीकि–रामायणस्य अयोध्याकाण्डे तीर्थस्नानस्य महत्त्वं तथा गङ्गायाः पवित्रत्वं उल्लेखितम्–

''तीर्थानि रमणीयानि पुष्कराणि सरांसि च।
स्नातोऽस्मि विविधेष्वेव सर्वपापैः प्रमुच्यते॥''

(अयोध्याकाण्ड, ११३.१४)

यद्यपि अत्र कुम्भस्य विशिष्टमूल्यं न दृश्यते, तीर्थस्नानस्य व्यापकमहत्त्वं स्पष्टं।

४. महाभारते

महाभारते तीर्थयात्रायाः महत्त्वं वर्णयित्वा कुम्भस्नानस्य पुण्यफलं वर्ण्यते

''प्रयागे यः स्नानं कुरुते मनुजः पुमान्।
सर्वपापविनिर्मुक्तः स याति परमां गतिम॥''

(महाभारत, वनपर्व, ८४.१२५)

कुम्भस्नानं मोक्षप्राप्त्यर्थं साधनम् इति प्रतिपाद्यते।

५. पद्मपुराणे

पद्मपुराणे हरिद्वारे कुम्भमेलायाः आयोजनं तथा तत्र स्नानस्य पुण्यफलं विस्तृतं वर्णितम्–

''गङ्गायामथ वा यमुना संगमे वै मनोहरे।
कुम्भे स्नात्वा च यः प्रेतः स यति परमां गतिम्॥''
(पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड, ७२.२१)

उपसंहारः

संस्कृतसाहित्ये कुम्भदर्शनम् आध्यात्मिकमहत्त्वेन विशेषं स्थानं प्राप्तमस्ति। पुराणेषु, काव्येषु, तथा महाकाव्येषु कुम्भस्नानं मोक्षदायकं, पुण्यवर्धकं च इति प्रतिपाद्यते।

महाकुम्भ का वैज्ञानिक दृष्टिकोण धार्मिक और सांस्कृतिक पक्ष के साथ-साथ भौतिक, जैविक, और सामाजिक विज्ञान के आयामों को भी समाहित करता है। यहाँ महाकुम्भ के वैज्ञानिक पक्ष का विश्लेषण उदाहरण सहित प्रस्तुत किया गया है:

----

१. ग्रहों की स्थिति और जल का प्रभाव (ज्योतिषीय और भौतिकीय दृष्टिकोण)

महाकुम्भ का आयोजन ज्योतिषीय गणना के आधार पर होता है। जब सूर्य, चंद्रमा, और बृहस्पति विशिष्ट स्थिति में होते हैं, तो इसे गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती के संगम पर अमृत प्राप्ति का प्रतीक माना जाता है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण:

- ज्योतिषीय रूप से कहा जाता है कि इस समय चंद्रमा और सूर्य का गुरुत्वीय प्रभाव पृथ्वी पर पानी की संरचना और ऊर्जा को प्रभावित करता है।
- उदाहरण: जापानी वैज्ञानिक डॉ.. मसारू इमोटो ने जल पर अध्ययन करते हुए दिखाया कि जल की संरचना उस पर पड़ने वाले ऊर्जा और भावनात्मक प्रभाव से बदलती है। महाकुम्भ के दौरान संगम का जल आस्था और सकारात्मक ऊर्जा से परिपूर्ण होता है, जो जल की संरचना को लाभकारी बना सकता है।

----

२. संगम का जल और उसकी स्वच्छता (रसायनशास्त्रीय दृष्टिकोण)

गंगा और यमुना के संगम का पानी विशेष रूप से महाकुम्भ के समय स्वच्छ और शुद्ध माना जाता है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोणः

- गंगाजल का स्व-शुद्धिकरण गुणः

गंगा नदी में बैक्टीरियाफेज नामक विषाणु पाए जाते हैं, जो जल में हानिकारक बैक्टीरिया को नष्ट कर देते हैं।

- उदाहरणः 2017 में हुए आईआईटी रुड़की के अध्ययन में पाया गया कि गंगा का जल अन्य नदियों की तुलना में लंबे समय तक ताजा और जीवाणुरोधी गुणों वाला होता है।

----

३. जनसामाजिक और मनोवैज्ञानिक प्रभाव

महाकुम्भ के आयोजन में लाखों लोग एकत्र होते हैं, और इसे एक महत्त्वपूर्ण सामूहिक अनुभव माना जाता है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोणः

- **सामाजिक एकजुटता का सिद्धांतः**

मनोविज्ञान में कहा गया है कि बड़े समूह में सहभागिता से व्यक्ति को आत्मबल और सकारात्मक ऊर्जा प्राप्त होती है।

- उदाहरणः महाकुम्भ के दौरान लोगों में सामूहिक ध्यान, प्रार्थना, और धार्मिक अनुष्ठानों से मानसिक तनाव कम होता है और सकारात्मक ऊर्जा का संचार होता है।

----

४. स्वास्थ्य और रोग प्रतिरोधक क्षमता (आयुर्विज्ञान दृष्टिकोण)

महाकुम्भ में स्नान को स्वास्थ्य लाभकारी माना गया है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोणः

- ठंडे पानी में स्नान करने से रक्त संचार में सुधार होता है और प्रतिरक्षा तंत्र मजबूत होता है।
- उदाहरणः कोल्ड शॉक प्रोटीन (Cold Shock Proteins) पर किए गए शोध बताते हैं कि ठंडे पानी में स्नान से शरीर में तनाव-रोधी हार्मोन का स्राव बढ़ता है।

----

५. पर्यावरणीय प्रभाव

महाकुम्भ जैसे विशाल आयोजन से स्थानीय पारिस्थितिकी और वातावरण पर प्रभाव पड़ता है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोणः

- महाकुम्भ के दौरान जल की गुणवत्ता, जनसंख्या घनत्व, और कचरा प्रबंधन की निगरानी एक चुनौती होती है।
- उदाहरणः हरिद्वार में २०१० में हुए महाकुम्भ के बाद कचरा प्रबंधन के लिए विशेष तकनीकों का उपयोग किया गया, जिससे पर्यावरणीय प्रभाव को कम किया जा सका।

निष्कर्ष

महाकुम्भ न केवल धार्मिक आस्था का प्रतीक है, बल्कि इसमें विज्ञान, पर्यावरण और मनोविज्ञान के गहरे पहलू भी समाहित हैं। इसकी वैज्ञानिक व्याख्या मानव जीवन और पर्यावरण के आपसी संबंधों को समझने का अवसर प्रदान करती है।

■

लोक आस्था और महाकुम्भ

*डॉ. सलिल कुमार पाण्डेय

माघ मास में प्रयागवास करते हुए साधक को अपनें तथा अपने परिवार के कल्याण के लिए जप-तप करना चाहिए। प्रयाग की गंगा का महत्त्व अवर्णनीय है। ऋषि मार्कण्डेय कहते हैं कि प्रयाग क्षेत्र में पांच कुण्ड के माध्यम से गंगा बहती है, इसलिए प्रयाग में प्रवेश करते ही उसी क्षण पाप नष्ट हो जाता है। मनुष्य कितना भी बड़ा पापी क्यों न हो, यदि वह हजारों योजन दूर से भी गंगा का स्मरण करता है तो उसे परम् गति की प्राप्ति होती है। गंगा का नाम लेने से मनुष्य पाप से छूट जाता है। दर्शन करने से उसे जीवन में मांगलिक अवसर देखने को मिलते है तथा स्नान और जलपान करके तो वह अपनी सात पीढ़ियों को पावन बना देता हैं। जो मनुष्य सत्यवादी, क्रोधरहित, अहिंसापरायण, धर्मानुगामी तत्वज्ञ और गौ एवं ब्राम्हण के हित में तत्पर रहकर गंगा और यमुना के संगम में स्नान करता हैं, वह पाप से मुक्त हो जाता है तथा जो मन से चिन्तन मात्र करता है वह अपने अधिक से अधिक मनोरथों को प्राप्त कर लेता है। इसिलिए समस्त देवताओं द्वारा सुरक्षित प्रयाग क्षेत्र में जाकर वहाँ एक मास तक ब्रम्हचर्य पूर्वक निवास करते हुए देवों और पितरों का तर्पण करना चाहिए।

कुम्भ पर्व कब से मनाया जा रहा है? इसका कोई सुनिश्चित प्रमाण नहीं मिलता, पर इस पर्व की प्राचीनता का अनुमान इसी से किया जा सकता है कि इसकी कथा पुराणों में आयी है। स्कन्दपुराण के अनुसार देवताओं और असुरों द्वारा समुद्र-मंथन करने पर जब अमृत कलश निकला तो देवता और असुर अमृत को प्राप्त करने के लिए आपस में लड़ने लगे। इन्द्र ने उस कलश को वहाँ से लेकर जाने के लिए अपने पुत्र जयन्त को संकेत किया। जयन्त उस कलश को लेकर दौड़ा। यह देखकर असुरों ने उसका पीछा किया, उधर देवता भी असुरों के पीछे दौड़े और सुर तथा असुरों के मध्य घनघोर युद्ध प्रारम्भ हो गया। तत्पश्चात् असुरों ने जयन्त से अमृत कलश प्रयाग, हरिद्वार, गोदावरी (नासिक) और अवन्तिका (उज्जैन) में छीना। इस छीना-झपटी में कुम्भ से कुछ अमृत की बूंदें छलक कर इन स्थानों पर गिर पड़ी। जहाँ पर बूँदें गिरी वहीं पर कुम्भ पर्व मनाया जाता है। असुर और सुरों में यह युद्ध बारह दिनों तक चला। देवताओं का एक दिन मनुष्यों के एक वर्ष के बराबर होता है। इसलिए यह पर्व प्रति बारह वर्ष के बाद मनाया जाता है।

*गोरखनाथ मन्दिर गोरखपुर।

अथर्ववेद में भी कुम्भ पर्व का उल्लेख मिलता है। यहाँ कहा गया है कि अमृत से पूर्ण कुम्भ, समुद्र मंथन के समय, जहाँ-जहाँ स्थापित किया गया था वहाँ-वहाँ इस कुम्भपर्व को सन्त प्रायः होता हुआ देखते हैं। यह कुम्भ पर्व चौदह भुवनों में समय-समय पर उपस्थित होता है।

गोपाल दत्त शास्त्री ने कुम्भ पर्व के सम्बन्ध में कथाओं का उल्लेख किया है जिसका उल्लेख यहां प्रासंगिक होगा। प्रथम कथा के अनुसार महर्षि दुर्वासा ने इन्द्र को दिव्य माला प्रदान की। इन्द्र ने उस माला को ऐरावत हाथी के मस्तक पर रख दिया और ऐरावत ने उसे खींचकर पैरों से कुचल दिया। महर्षि दुर्वासा से यह अपमान सहन न हुआ और उन्होंने भयंकर शाप दे दिया जिससे संसार भर में हाहाकार मच गया। अनावृष्टि और अकाल से प्रजा अत्यन्त पीड़ित हो गयी। नारायण की कृपा से समुद्र मंथन प्रक्रिया द्वारा लक्ष्मी प्रकट हुई जिससे वृष्टि होने लगी और कृषक वर्ग का कष्ट समाप्त हो गया। अमृतपान से वंचित असुरों ने कुम्भ को नागलोक में छिपा दिया जहाँ से गरुण ने उसका उद्धार किया और उसी सन्दर्भ में क्षीरसागर तक पहुंचने से पूर्व जिन स्थानों पर उन्होंने कलश को रखा, वे ही कुम्भ स्थलों के रूप में प्रसिद्ध हुए। द्वितीय कथा के अनुसार प्रजापति कश्यप की दो पत्नियों के सौतियाडाह से सम्बद्ध है। विवाद इस बात पर हुआ कि सूर्य के अश्व काले हैं या सफेद। जिसकी बात झूठ निकलेगी वही दासी बन जायेगी। कद्रू के पुत्र थे नागराज वासुकि और विनता के पुत्र थे वैनतेय गरुड़। कद्रू ने नागवंश को प्रेरित करके उनके कालेपन से सूर्य को डंक दिया फलतः विनता हार गयी। दासी रूप में अपने महासंकट से छूटने के लिए विनता ने अपने पुत्र गरुड़ से कहा तो उन्होंने पूछा यह कैसे सम्भव है? कद्रू ने शर्त रखी कि नागलोक से वासुकि रक्षित अमृत कुम्भ जब कोई ला देगा तो में तुम्हें दासत्व से मुक्ति दे दूँगी। विनता ने अपने पुत्र को दायित्व सौंपा जिसमें वे सफल हुए। गरुड़ उस अमृत कलश को लेकर भूलोक होते हुए पिता कश्यप मुनि के उत्तराखण्ड में गंधमादन पर्वत पर स्थित आश्रम के लिए चल पड़े। उधर वासुकि ने इन्द्र को सूचना दे दी। इन्द्र ने गरुड़ पर चार बार आक्रमण किया और चारों प्रसिद्ध स्थानों पर कुम्भ का अमृत छलका जिससे कुम्भपर्व की धारणा उत्पन्न हुई।

■

विविधता में एकता का प्रतीक है महाकुम्भ

*डॉ. अभिषेक कुमार उपाध्याय

महाकुम्भ भारत में आयोजित होने वाला एक विशाल विश्व का मानव मेला है, जिसमें करोड़ों श्रद्धालु हर बारहवें वर्ष प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में से किसी एक स्थान पर पवित्र डुबकी लगाने के लिए एकत्र होते हैं। प्रत्येक १२वें वर्ष के अतिरिक्त प्रयाग में दो महाकुम्भ पर्वों के बीच छह वर्ष के अन्तराल में कुम्भ भी होता है। वर्ष २०१३ के कुंभ के बाद २०१९ में तीर्थराज प्रयाग में कुम्भ मेले का आयोजन हुआ था और अब २०२५ में पुनः महाकुंभ का आयोजन हो रहा है। ज्योतिष की दृष्टि में मकर संक्रान्ति पर इसका आयोजन आरम्भ होता है, जब सूर्य और चन्द्रमा, वृश्चिक राशि में और वृहस्पति मेष राशि में प्रवेश करते हैं। मकर संक्रान्ति के होने वाले इस योग को कुम्भस्नानयोग कहते हैं और इस दिन को विशेष मंगलकारी माना जाता है, क्योंकि ऐसा माना जाता है कि इस दिन पृथ्वी से अतिरिक्त शास्त्रों में वर्णित दिव्य स्वर्गादि लोकों के द्वार खुलते हैं और ऐसा मानना है कि इस दिन स्नान करने से आत्मा को दिव्य लोकों की प्राप्ति सहजता से हो जाती है। अब हम कुम्भ शब्द पर विचार करें तो संस्कृत की दृष्टि में इसका शाब्दिक अर्थ घड़ा है। इसका वर्णन वैदिक ग्रन्थों में भी पाया जाता है और मेला शब्द का अर्थ है, किसी एक स्थान पर मिलना, एक साथ चलना, सभा में या फिर विशेष रूप से सामुदायिक उत्सव में उपस्थित होना। यह शब्द ऋग्वेद और अन्य प्राचीन ग्रन्थों में भी पाया जाता है। इस प्रकार, कुम्भ मेले का अर्थ है अमरत्व प्राप्ति अथवा स्वबोध की यात्रा का मेला ।

पौराणिक रूप में कुम्भमहापर्व के आयोजन को लेकर एक पौराणिक कथा प्रचलित है, देव-दानवों द्वारा समुद्र मन्थन से प्राप्त अमृतकुम्भ से अमृत बूँदें गिरने को लेकर है। इस कथा के अनुसार महर्षि दुर्वासा के शाप के कारण जब इन्द्र और अन्य देवता कमजोर हो गये तो दैत्यों ने देवताओं पर आक्रमण कर उन्हें परास्त कर दिया। तब सब देवता मिलकर भगवान् विष्णु के पास गए और उन्हे सारा वृतान्त सुनाया। तब भगवान् विष्णु ने उन्हे दैत्यों के साथ मिलकर क्षीरसागर का मन्थन करके अमृत निकालने की सलाह दी। भगवान् विष्णु के ऐसा कहने पर सम्पूर्ण देवता दैत्यों के साथ सन्धि करके अमृत निकालने के यत्न में लग गए। अमृत कुम्भ के निकलते ही देवताओं के इशारे से इन्द्रपुत्र जयन्त अमृत-कलश को लेकर आकाश में उड़ गये।

*मुख्य न्यासी श्री श्री 1008 श्री मौनी बाबा चौरिटेबल ट्रस्ट न्यास तथा मन्दिर एवं गुरुकुल योजना सेवा प्रमुख जम्मू कश्मीर प्रान्त।

उसके बाद दैत्यगुरु शुक्राचार्य के आदेशानुसार दैत्यों ने अमृत को वापस लेने के लिए जयन्त का पीछा किया और दोनों पक्षों में घमासान भी हुआ, उसी बीच पृथ्वी के चार स्थानों प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक पर कलश से अमृत बूँदें गिरी थीं। उस समय चन्द्रमा ने घट से प्रस्रवण होने से, सूर्य ने घट फूटने से, गुरु ने दैत्यों के अपहरण से एवं शनि ने देवेन्द्र के भय से घट की रक्षा की। कलह शान्त करने के लिए भगवान् ने मोहिनीरूप धारण कर यथाधिकार सबको अमृत बाँटकर पिला दिया। इस प्रकार देव-दानव युद्ध का अन्त किया गया। अमृत प्राप्ति के लिए देव-दानवों में परस्पर बारह दिन तक निरन्तर युद्ध हुआ था। देवताओं के बारह दिन मनुष्यों के बारह वर्ष के तुल्य होते हैं। अतएव कुम्भ भी बारह होते हैं। उनमें से चार कुम्भ पृथ्वी पर होते हैं और शेष आठ कुम्भ देवलोक में होते हैं, जिन्हें देवगण ही प्राप्त कर सकते हैं, मनुष्यों की वहाँ पहुँच नहीं है। जिस समय में चन्द्रादिकों ने कलश की रक्षा की थी, उस समय की वर्तमान राशियों पर रक्षा करने वाले चन्द्र-सूर्यादिक ग्रह जब आते हैं, उस समय कुम्भ का योग होता है अर्थात् जिस वर्ष, जिस राशि पर सूर्य, चन्द्रमा और बृहस्पति का संयोग होता है, उसी वर्ष, उसी राशि के योग में, जहाँ-जहाँ अमृत बूँद गिरी थी, वहाँ-वहाँ कुम्भमहापर्व आयोजित होता है।

सनातन धर्म एवं दर्शन में परब्रह्म, परमात्मा, अखण्ड, अनन्त है। उन्हें ईश्वर, भगवान् आदि नामों से जाना जाता है। उसे प्राप्त करना परम पुरुषार्थ है। उसके प्राप्त करने के लिए हमारी संस्कृति में अनेक साधन हैं- तीर्थयात्रा, व्रत, गंगा-स्नान आदि। किन्तु इन सब से अधिक माहात्म्य महाकुम्भ महापर्व का है। जैसा कि शास्त्र में हमें कई उदाहरणों मिलते हैं -

सूर्यग्रहे कुरुक्षेत्रे कार्तिक्याञ्च त्रिपुष्करे।
माघमासे प्रयागे च यः स्नायात्सोऽतिपुण्यवान् ॥

अर्थात् सूर्यग्रहण में कुरुक्षेत्र और कार्तिक मास में त्रिपुष्करक्षेत्र में जो स्नान का फल होता है, उससे अति पुण्य माघमास में प्रयागस्नान से होता है और अन्य प्रमाण की बात करें तो यह वर्णन भी मिलता है-

सहस्रं कार्तिके स्नानं माघे स्नानशतानि च।
वैशाखे नर्मदास्नानं कुम्भस्नानेन तत्फलम्॥

हजारों बार कार्तिक मास में स्नान करने का, सैकड़ों बार माघ-मास में स्नान करने का और वैशाख में नर्मदा-स्नान का जो फल होता है, वह फल कुम्भस्नान के एक बार करने पर होता है।

महाकुंभ के आध्यात्मिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक महत्व के साथ ही इसका

सामाजिक समरसता का भी बहुत महत्व है जिसका वर्णन संक्षेप में किया जाएगा।

सनातन जीवन पद्धति को समझने में पुराणेतिहास की महत्वपूर्ण भूमिका मानी जाती है। यहां पर उपरोक्त समुन्द्र मंथन की कथा को मानव इतिहास का एक रूपक माना जाय तब भी ऐसी रुचिकर कथा विश्व साहित्य में कहीं दृश्य नहीं हैं। इस प्रसंग में सत–असत् के बीच की टकराव द्वारा देव–दानव के इतिहास की जो इतिवृत्तात्मक कथा मिलती है उसका सीधा सम्बन्ध मनुष्य और कुम्भ दोनों से जुड़ता हुआ प्रतीत होता है। हजारों वर्ष पूर्व में ऐसी परिकल्पना करते हुए ऋषि–मुनियों का सृष्टि की संरचना समझने हेतु भ्रमण करते हुए प्रयाग आदि चारों प्रमुख स्थानों की खोज करना मानव जीवन के लिए एक दूरदृष्टि ही थी। तुलसीदास ने त्रिवेणी स्नान के लिए पधारने वाले लोगों में देव, दनुज, किन्नर तक नर की सभी श्रेणियों को समाहित किया है। इसका तात्पर्य यह है कि कुम्भ के आयोजन में बिना किसी भेद–भाव के सभी क्षेत्रों जातियों, वर्णों एवं समुदायों के लोग शामिल होते थे। कुम्भ में वही परम्परा आज भी चली आ रही है। त्रिवेणी में आने वाले स्नानार्थियों में साधु–सन्तों, महंतों तथा प्रशासन के द्वारा किसी तरह का भेदभाव नहीं किया जाता हो ऐसा दृश्य नहीं है और वर्तमान शासन में सम्भव भी नहीं है। इस दृष्टि से कह सकते है कि केवल आध्यात्मिक ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक एवं सामाजिक समरसता का अनूठा दृष्टांत हैं महाकुम्भ महापर्व।

मानवीय सभ्यता के विकास तथा काल परिवर्तन का प्रभाव मनुष्य के प्रत्येक क्रिया–कलापों पर अवश्य पड़ता है। आधुनिक युग विज्ञान एवं प्रविधि का युग है। सूचना क्रान्ति के सहयोग से समस्त विश्व की घटनाओं की सूचना क्षणमात्र में प्रसारित–प्रचारित हो जाती है। यातायात के त्वरित साधनों के द्वारा मनुष्य का आवागमन पहले की तुलना में बहुत बढ़ गया हैं। सम्पूर्ण विश्व एक वृहद् गाँव के रूप मे परिणत हो रहा है। अतः जहाँ पहले कुम्भ केवल सम्पूर्ण भारत के लोगों को आकर्षित करता था। अब उसका आकर्षण वैश्विक स्तर पर भी अति समृद्ध हो गया हैं। इस अवसर पर अनेक विदेशी पर्यटक ही नहीं बल्कि अब भारत के बाहर रहने वाले जो सनातन संस्कृति में आस्था रखते है वे श्रद्धालु भक्तजन भी पधारते हैं और यहाँ के अनोखे दृश्यों का आनंद लेते हैं।

हमारे शरीर रूपी कुम्भ में जो आत्मारूपी अमृत है उस अमृत के अनुसन्धान का भी अवसर देता है महाकुम्भ महापर्व और यहीं आत्ममंथन भी समुद्र मंथन जैसे करना होता है। अपने अंतःकरण में सकारात्मक ऊर्जा के रूप में विद्यमान देवगण एवं नकारात्मक ऊर्जा के साथ दानव उपस्थित होते है और उसके मंथन का अवसर प्रदान

करता है महाकुम्भ और उस अमृततत्व को खोजे बिना समुद्र मंथन का कार्य पूर्ण नहीं होता। अतः इसके लिए अपने भीतर स्थित दैवीय और आसुरी शक्तियों को काम में लगाने की आवश्यकता है। महाकुम्भपर्व पर साधु-संत-महात्माओं से हमारे अन्दर स्थित अमृत खोजने की शिक्षा लेना ही इस पर्व का उद्देश्य है।

महाकुम्भ में स्नान-दर्शन करना सर्वश्रेष्ठ माना जाता है और इसका उद्देश्य है साधु संग, सत्संग तथा परमेश्वर का स्मरण चिन्तन तेज करना। भगवान् कहते है **''तीर्थानां च परं तीर्थं कृष्णनाम महर्षयः।''**

सन्त कबीर ने भी कहा है-

''तीरथ गए तो एक फल, सन्त मिले फल चार। सतगुरु मिले अनेक फल कहे कबीर विचार।''

और स्कन्दपुराण में भी उल्लेख मिलता है-

सत्यं तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रहः।
सर्वभूतदया तीर्थं तीर्थमार्जवमेव च।

अर्थात् दया तीर्थ है, इन्द्रिय पर नियंत्रण तीर्थ है, सब प्राणियों पर दया करना तीर्थ हैं। यह भी उल्लेख है कि दान भी तीर्थ है, मन का संयम तीर्थ है, संतोष तीर्थ है, ब्रह्मचर्य परमतीर्थ है। प्रियवचन बोलना भी तीर्थ है। इसके बदले यहाँ तक कहा गया है कि यदि भीतर का भाव शुद्ध नहीं होता तो दान, जप, तप, शौच, तीर्थ सेवन, शास्त्र श्रवण और स्वाध्याय सब अतीर्थ हो जाते है।

आज के सामाजिक और राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में ये बातें अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा प्रासंगिक है। आधुनिककाल में अनेक लोग अन्याय, भ्रष्टाचार आदि दुष्कार्य कर स्वार्थ सिद्ध कर रहे हैं। छल-बल-कौशल से एक दूसरे को लूट रहे हैं। इनमें अधिकाधिक शिक्षित लोग भी है। ऐसे दुष्ट बुद्धि के लोग पूजा अर्चना करते हैं, दान-धर्म भी करते हैं, तीर्थाटन के लिए भी निकलते हैं, परन्तु उन लोगों को पता ही नहीं कि किसी भी धार्मिक कार्य करने का अधिकार उनके पास नहीं हैं। वे ये कार्य करते भी है तो निष्फल ही होता है। देवी-भागवत में स्पष्ट रूप से उल्लेख है-

अन्यायोपार्जितेनैव द्रव्येण सुकृतं कृतम्।
न कीर्तिरिहलोके च परलोके न तत्फलम् ॥

अर्थात् अन्यायोपार्जित द्रव्य (धनादि) के द्वारा जो कुछ धार्मिक कार्य किया जाता है। उन सब से इहलोक या परलोक में कुछ भी फल मिलने वाला नहीं है। साथ ही उन कर्मों से जो फल प्राप्त होगा, वह उन लोगों को प्राप्त होगा, जिन लोगों से धन

छीनकर लाया गया। दुष्कार्य करनेवालों को कर्म के अनुसार पापों का फल भोगना भी पड़ेगा, क्योंकि कर्म का फल भोगना अनिवार्य है। इसलिए जब तक सद्‌भावना के साथ व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्वकल्याण के उद्देश्य से काम नहीं करेगा तब तक किसी भी धार्मिक कार्य, तीर्थाटनों से कुछ पुण्यफल की प्राप्ति असंभव है। वैसे मनुष्य अनादिकाल से समुद्र मंथन से निःसृत अमृत कलश की खोज में तल्लीन है। प्रारंभ में अमृत अन्वेषण की इस अनादि यात्रा में हम एकांकी रहे होंगे। इस क्रम मे सदा ही असफल होते हुए हमने मिलकर अमृत कलश को खोजना शुरू किया होगा। मिलकर सत्य, अमर्त्य व सुख खोजने का क्रम ही मेला है। वस्तुतः यही अमर्त्य अन्वेषण की साधु रीति है। मिलकर अमृत खोज की प्रक्रिया की सुचारुता की प्रामाणिकता, पुराण के उस सुप्रसिद्ध आख्यान से भी सिद्ध होती है, जिसमें देवों एवं दानवों ने मिलकर समुद्रमंथन से अमृत खोज निकाला। अपनी-अपनी योग्यता एवं शक्ति के द्वारा आज भी हम परिवार, समाज, राष्ट्र, जाति एवं संसार के रूप में मिलकर अमृत कलश की प्राप्ति के लिए परम व्यग्र हैं। वैदिक सनातन धर्म का महाकुंभ मेला अमृत खोज का अनुपम, गौरववर्धक विराट् एवं प्रामाणिक निदर्शन है। देवताओं एवं दानवों के समुद्र मंथन से जो अमृतकलश प्राप्त हुआ था उसके पहले ही विषकलश भी प्राप्त हुआ था, जिसको भगवान् शंकर ने पीकर पचाया एवं मंथन करने वालों को बचाया। मंथन की संपूर्णता भी कच्छपावताार भगवान् विष्णु के सहयोग से ही हुई जो वस्तुतः अमृतकलश ही नहीं अमृत सागर हैं। संसार का सम्पूर्ण अमृत उनके द्वारा ही वितरित एवं प्रसारित है। वर्तमान महाकुंभ मेला इसी एकत्रीकरण का विराट् स्वरूप है।

इस पावन पवित्र अवसर पर संगम में डुबकी लगाना और स्नान करना दोनों अलग अलग बात है। स्नान सिर्फ मनुष्य ही कर सकता है। स्नान का अर्थ है दैहिक, मानसिक और आध्यत्मिक रूप से शुद्ध या स्वच्छ होना। डुबकी तो सभी लगा सकते हैं, लेकिन स्नान? इसके साथ संकल्प और मंत्र की आवश्यकता होती है। स्नान के पहले हाथ में जल लेकर संकल्प करना है कि शरीर, मन और आत्मा की मलिनता, कलुषता साफ हो जाय, आगे इस मलिनता-कलुषता से प्रभावित होकर कुछ नकारात्मक कार्य करने की इच्छा न रहें। मंत्रोच्चारण सहित डुबकी लगाकर तर्पण करना चाहिए।

समाज के प्रत्येक वर्ग के लोग इस महाकुंभ मेला में भाग लेकर अपनी अनादि अमरत्व तृष्णा को शांत करना चाहते हैं। वैसे तो संसार के सभी मिलन स्थल ही, जाने-अनजाने में अमृत खोज की यात्राओं में ही हैं। अतएव इनके समायोजन व

संप्रेरक वैदिकविद्या की जिज्ञासा कोई महत्व नहीं रखती, परंतु महाकुंभमेला का अतुलनीय विराट् स्वरूप बलात् ही वैदिक संप्रेरक विद्या की जिज्ञासा को जन्म देता है। क्या कुंभ वेदों के द्वारा समर्थित है? क्या स्मृतियाँ कुंभ की पक्षधर हैं? क्या पुराण कुंभ अस्तित्व के साक्षी हैं? क्या इतिहास कुंभ को भी अपना समझते हैं?

इन समस्त अंतर मन के प्रश्नों का उत्तर हमें महाकुम्भ में जाकर मिल जाएगा।

महाकुंभ मेला, दुनिया भर में सबसे बड़ा शांतिपूर्ण रूप से बिना किसी अव्यवस्था के साथ आयोजित मेला है जिसके संचालन के लिए जगत जननी स्वयं आ जाती हैं।

ऐसे तो हमारे प्रत्येक उत्सव और अनुष्ठान के पीछे शास्त्रीय आधार होता है। जोश और उत्साह के साथ-साथ एक ठोस वैज्ञानिक, ऐतिहासिक और दार्शनिक आधार भी होता है। ये सभी विशेषताएँ मिलकर किसी त्योहार को मनाने या अनुष्ठान करने का कारण प्रदान करती हैं। इन अनुष्ठानों का उद्देश्य किसी व्यक्ति को आध्यात्मिक मार्ग पर ले जाना है जहाँ वे पूर्ण मनोवैज्ञानिक संतुलन, नवीनीकरण और विश्राम प्राप्त कर सकें। यदि हम ज्योतिष शास्त्र की बात करे तो यह उत्सव तब होता है जब सूर्य, चंद्रमा और बृहस्पति कुछ निश्चित स्थितियों में होते हैं और इसका आयोजन नदी संगम पर होता है जहाँ सौर चक्र में विशिष्ट अवधियों में अद्वितीय शक्तियाँ कार्य करती हैं, यदि हम सूक्ष्म विचार करे तो यह आयोजन जलमार्गों के ऊर्जा मंथन से जुड़कर शरीर को लाभ पहुँचाता है। महाकुंभ मेला पूरे भारत से लोगों का एक विशाल जमावड़ा है जो पवित्र संगम तट पर स्नान करने के लिए आते हैं। यह आयोजन ज्ञान से भरा हुआ है और इसमें कई अनुष्ठान और सांस्कृतिक गतिविधियाँ शामिल हैं। कुंभ मेला न केवल दुनिया का सबसे बड़ा मानव समागम है, बल्कि आध्यात्मिक चिन्तन की दृष्टि से गहरा भी है, जो दुनिया भर से लाखों भक्तों, संतों और साधकों को आकर्षित करता है। तीर्थराजप्रयाग में संगम तट पर डुबकी लगाना लोगों के लिए अपने आध्यात्मिक सार से फिर से जुड़ने, अपनी आत्मा को शुद्ध करने और सहस्राब्दियों से चली आ रही पवित्र यात्रा पर निकलने का अनेक जन्मों के पुण्यों का एक अवसर है।

इस अवसर पर साधकों द्वारा तिथि विशेष से तिथि विशेष तक कल्पवास किया जाता है। यह महाकुंभ उत्सव का एक गहरा लेकिन कम लोगों का पहलू है, जो साधकों के आध्यात्मिक अनुशासन, तपस्या और उच्च चेतना के लिए समर्पित एक अनुष्ठान है। संस्कृत से उत्पन्न ''कल्प'' का अर्थ है ब्रह्मांडीय युग और श्वास का अर्थ है निवास, जो गहन आध्यात्मिक अभ्यास की अवधि का प्रतीक है। कल्पवास में भाग लेने वाले तीर्थयात्री सादगी का जीवन अपनाते हैं, सांसारिक सुख-सुविधाओं का त्याग करते हैं

और ध्यान, प्रार्थना और धर्मग्रंथ अध्ययन जैसे दैनिक अनुष्ठानों में व्यस्त रहते हैं। कल्पवास में वैदिक यज्ञ और होम, पवित्र अग्नि अनुष्ठान जो दिव्य आशीर्वाद का आह्वान करते हैं और सत्संग, बौद्धिक एवं भक्ति विकास के लिए आध्यात्मिक प्रवचन भी शामिल हैं। यह गहन अनुभव बड़े तीर्थयात्रा के भीतर गहरी भक्ति और आध्यात्मिक परिवर्तन को बढ़ावा देता है।

महाकुंभ मेले की परंपराएं समय और स्थान की सीमाओं से अलग जाकर लाखों लोगों को उनकी पैतृक जड़ों और आध्यात्मिक मूल से जोड़ती हैं। यह एकता, करुणा और विश्वास के शाश्वत मूल्यों का एक जीवंत प्रमाण है जो समाज को एक सूत्र में बांधता है। भारतीय सभ्यता संस्कृति और धर्म के लिए महाकुम्भ एक अपूर्व पर्व माना है। महाकुम्भ एक ऐसा विशाल पर्व है जहाँ सनातन हिन्दू संस्कृति अपने सम्पूर्ण वैभव-समृद्धि और सौन्दर्य के साथ समुपस्थित रहती है। यह सनातन संस्कृति का बृहत्तम मिलन बिन्दु है। भाषा, जाति-पांति, सम्प्रदाय, विचारधारा, वेश-भूषा सबको एक रंग में रंगता तीर्थराजप्रयाग का मेला राष्ट्रीय एकता का सबसे बड़ा दृष्टांत है।

महाकुंभ जिस दिन आरंभ होगा, उस दिन रवि योग शुभ संयोग बनने से स्नान व दान का महत्व बढ़ रहा है। इस बार इन प्रमुख तिथियों पर स्नान का १४४ वर्ष बाद यह महायोग बन रहा है। जिसमें प्रमुख तिथियां शामिल है १३ जनवरी २०२५ पौष पूर्णिमा एवं १४ जनवरी २०२५ मकर संक्रांति, २९ जनवरी २०२५, मौनी अमावस्या, ०३ फरवरी २0२५ बसंत पंचमी, ०५ फरवरी अचला सप्तमी, १२ फरवरी २०२५ माघी पूर्णिमा एवं २६ फरवरी २०२५ महाशिवरात्रि स्नान के बाद समापन होगा। आप सभी सनातन संस्कृति एवं धर्म में आस्था रखने वाले श्रद्धालु भक्तजनों से सादर आग्रह है कि इस अति विशिष्ट अवसर को गवाए बिना तीर्थराज प्रयाग में इस महापर्व पर डुबकी लगाकर अपना जीवन धन्य करें।

माघ मकरगत रवि जब होई।
तीरथपतिहि आव सब कोई।।

■

समुद्र मंथन व मनुष्य जीवन

*आचार्य नवनीत योगाचार्य

जब कोई काम बड़ा हो, तो उसकी शुरुआत में कई विघ्न आते हैं। समुद्र मंथन की कथा से हम मनुष्यों को भी अपने जीवन में यही प्रेरणा लेने की आवश्यकता है ॥

जिस प्रकार समुद्र मंथन के दौरान मद्राचल पर्वत को घिसने के लिए वासुकी नाग की रस्सी का प्रयोग किया गया था, उसी प्रकार मनुष्य भी जन्म लेने के बाद से कभी माता - पिता, कभी मित्र,कभी पत्नी और बच्चों का सहारा ले स्वयं को घिसता ही रहता है ।

कूर्म अवतार के रूप में जिस प्रकार उसको सहारा देने के लिए भगवान् आते हैं उसी प्रकार मनुष्य जीवन मे सहारा देने के लिए ईश्वर ही हमारे परिवार के रूप में जन्म लेते है । समुद्र मंथन में वासुकि नाग की पूँछ की तरफ़ जिस तरह देवता यानी मनुष्य के परिवार जन आराम का सहारा ले उसे घिसते रहते हैं और वह चाहकर भी उनको कष्ट नहीं देता है और जिस प्रकार राक्षस मुँह की तरफ रहे यानी मनुष्य के प्रतिद्वंद्वी उसके सामने रहते हैं और वह सदैव उनके ऊपर अपने विष को छोड़ता ही रहता है ।

मनुष्य जीवन और समुद्र मंथन से क्या निष्कर्ष निकलता है और किसे क्या मिलता है, इसको इस लेख में परिभाषित करने का प्रयास कर रहा हूँ । यहाँ ध्यातव्य है कि जिस प्रकार समुद्र को मथने पर उसमें से १४ रत्न निकले थे, जो पूरे संसार के लिए महत्वपूर्ण हैं। उसी प्रकार मनुष्य का जीवन इस पृथ्वीलोक पर आता है तो वह अपने स्थूल शरीर रूपी मद्राचल पर्वत से संसार रूपी समुद्र को विभिन्न रिश्तों-नातों व जिम्मेदारियों रूपी वासुकी नाग से खिचा जाता हुआ मथता है और नितन्तर घिसते-घिसते उसका शरीर संसार समुद्र से १४ जीवन के आवश्यक रत्नों को प्राप्त कर जीवन को पूरा करता है यहीं मनुष्य जीवन के प्रारंभ से समाप्ति तक की कहानी है।

अब समुद्र मंथन से क्रमशः निकले हुए १४ रत्नों को मनुष्य जीवन के विविध पक्षों के साथ अन्तः सम्बन्धित करने का यथामति प्रयास कर रहा हूँ।

हलाहल (कालकूट विष)-भगवान शिव(नीलकंठेश्वर) मनुष्य को गर्भ में आते ही तरह-२ की यातनाओं को सहते हुए हलाहल विष का पान करना करना पड़ता है तब इस मृत्यु लोक में जन्म लेता है। और यही आने के बाद उसका नामकरण होता है ॥

चंद्रमा, - भगवान शिव - मनुष्य के जीवन में चन्द्रमा की तरह जन्म से लेकर मृत्यु

*गोरखनाथ मन्दिर गोरखपुर।

तक कभी अंधियारा तो कभी उजाला रहता है, इन विपरीत परिस्थितियों में भी जिस व्यक्ति का मन निर्मल और शीतल शांत होता है, जिस व्यक्ति का मन चंद्रमा के समान सबको शीतलता रूपी सुख प्रदान करने वाला हो जाता है, वह परमात्मा के मस्तक पर शोभायमान होता है जो अपने शील से सबको शीतल रखता है वही भगवान् के मस्तक पर धारण हो जाता है ।

कामधेनु (इच्छापूर्ति गाय)ब्रह्मर्षिओं ने ग्रहण की थी यहाँ मनुष्य जीवन में साधु–संतों का आज भी वही पद है सब कुछ होते हुए भी सामने सब प्रकार के भोगों के लिए वस्तुओं का और मन माँगे वस्तु पाने के लिए कह देने की आवश्यकता है परन्तु अपनी सब इच्छाओं को त्याग कर दुसरों के प्रति सदैव तत्पर रहना यही यह दर्शाता है।

अपने जीवन के मध्यम समय में मनुष्य राजा की तरह होता है ।

उच्चैःश्रवा,–इन्द्र– यह यश की तरह हैं एक समय मनुष्य हर चीज को पाना चाहता है और सब कुछ पाने की लालसा और अपने यश को बढ़ाने के चक्कर में सब कुछ भुल कर उसी में लगा रहता है। बस इसी से जो बचकर निकल जाता है वहीं परम पद प्राप्त करता है।

ऐरावत (सफ़ेद चार दांत वाला हाथी) – इन्द्र – जिस प्रकार हाथी मदोन्मत्त रहती है उसी प्रकार कीर्ति भी चारों तरफ़ से जब आती है तो मनुष्य की बुद्धि धीरे–धीरे रज,तम की ओर बढ़ जाती है उसके मद मे व्यक्ति चूर हो जाता है

कल्पवृक्ष, – स्वर्ग में इन्द्र – यह एक आदर्श(आईने) की तरह है जो आपको अपना पुरा स्वरूप दिखाता रहता है मनुष्य को अपनी सभी कामनाओं को पूरा करने के लिए पहले स्वयं को जानना पड़ता है और उसके अनुरूप यथोचित कामनाएं करनी पड़ती है, तभी वह पूरा होता है।

रंभा नामक अप्सरा – इन्द्र (स्वर्ग मे बड़ी अप्सरा) – स्त्री हो या पुरुष, जब मनुष्य के जीवन में नया योग होता है तो उसके जीवन का एक नया युग आरंभ होता है जिसमें उसको अनेक प्रकार के आकर्षण अपनी तरफ खींचते हैं,अब यही मनुष्य को अपने जीवन में संभल कर चलना होता है, जो नहीं सभला वह नष्ट हो जाता है।

कौस्तुभ मणि, – भगवान् विष्णु जी – एक चमकदार अद्भुत वस्तु जिसे जीवन भर व्यक्ति खोजता रहता है परन्तु वह सिर्फ ईश्वर को ही चुनती है। जो व्यक्ति ईश्वर का आश्रय लेता है उसे वह वस्तु भी प्राप्त हो जाती है।

महालक्ष्मी, – भगवान् विष्णु जी – लक्ष्मी के साथ यश, ऐश्वर्य व कीर्ति सब चले आते हैं। लक्ष्मी जी सदैव शांत चित्त, निर्मल कोमल मनुष्य को ही अपना चुनाव करती है । इसलिए हमें भी वैसा हीं बनने का प्रयास करना चाहिए।

पांचजन्य शंख, – भगवान् विष्णु जी – यह शंख चुनौतियों के समक्ष उत्साह के साथ उठ खड़े होने का प्रतीक है। जो व्यक्ति उत्साह सम्पन्न होता है उसी को लक्ष्मी जी भी वरण करती हैं।

सारंग धनुष–भगवान् विष्णु ने ऋषि ऋचिक को सारंग धनुष दिया – ऋषि ऋचिक के पौत्र परशुराम से भगवान राम को यह धनुष दे दिया गया, जिससे रावण का वध हुआ फिर देवता वरुण को दिया गया, जो फिर महाभारत काल में श्रीकृष्ण को दे दिया गया। दक्षिण भारत में सारंग धनुष को हीं कोदंड के नाम से भी जाना जाता है, इससे तात्पर्य है मनुष्य को अगर योद्धा का पद मिलेगा तो कोई भी हो उसे जीवन भर अपने और अपनों के शत्रुओं से लड़ता ही रहना पड़ेगा। अपने जीवन में आने वाले युद्धों से लडने के लिए हमेशा तैयार रहना चाहिए।

वारुणी (मदिरा) – राक्षसों को – मदिरा का पान करने के बाद मनुष्य अपना होश खो देता है उसे जिस प्रकार किसी व्यक्ति विशेष का भान नहीं रह जाता है उसी से वह साधारण सा मनुष्य अपने आनन्द के लिए एक राक्षस रूपी हो जाता है।

धन्वन्तरि, – चिकित्सा क्षेत्र में देवताओं का वैद्य – मनुष्य के जीवन का अंतिम पड़ाव उसे वृद्ध बनाता है और उसका शरीर अनेक प्रकार की बीमारी का घर बन जाता है, जहां उसे अपने लिए वैद्य की आवश्यकता होती है। अपने कमाये धन से अपने धन्वन्तरि की आवश्यकता आन पड़ती है। जिसके द्वारा मनुष्य स्वस्थ हो सुखी जीवन जीता है।

अमृत – देवताओं को मिला – जिस प्रकार मनुष्य का जन्म हुआ है और उसका जीवनकाल चलता है अन्त में पहुँच कर उसकी समझ में आता है कि उसे आवश्यकता किस वस्तु की थी। वही अमृत है स्वयं को खोजना ही असली जीवन का मंथन है, आत्मज्ञान के द्वारा ईश्वर को प्राप्त कर उनके हाथों अमृत रूपी अमरता को चख कर उन्हीं में लीन हो जाना यही मनुष्य जीवन का सार है।

आध्यात्मिक जीवन यही हैं। जो पहले के रत्नों में से कुछ भी लेकर सन्तुष्ट रहता है और आगे के लिए यत्न नहीं करता है, तो बाद में उसे मिलने वाला अमृत नहीं मिलता। इस प्रकार अपने जीवन के बारे में मंथन करना ही समुद्र मंथन है,असली

अमृत आपकी आत्मा ही है ॥

चतुर्दश रत्नों का उल्लेख पुराणों में इस प्रकार है–

"लक्ष्मीः कौस्तुभपारिजातकसुराधन्वन्तरिश्चन्द्रमाः।
गावः कामदुहा सुरेश्वरगजो रम्भादिदेवांगनाः।
अश्वः सप्तमुखो विषं हरिधनुः शंखोमृतं चाम्बुधेः।
रत्नानीह चतुर्दश प्रतिदिनं कुर्यात्सदा मंगलम्।"

उपर्युक्त चतुर्दश रत्न हमारा मंगल करते रहें।

अब इसी सन्दर्भ में महाकुम्भ १२ साल मे क्यों मनाया जाता है, इस पर विचार करते हैं। समुद्र मंथन के अंत में जब धन्वन्तरि अमृत लेकर निकले तो असुरों को ना मिले इसलिए इन्द्र का बेटा जंयत उसे लेकर भागा, उसे बचाने को सूर्य, उनके पुत्र शनि और बृहस्पति भी पीछे भागे। उस भागने में उसकी बुंदे चार जगह हरिद्वार, प्रयागराज, नासिक और उज्जैन में गिरीं। १२ दिन तक वे भागते रहे। देवताओं का १ दिन मनुष्य के १ साल के बराबर होता है इसलिए कुम्भ १२ साल में आता है। १२ साल में पूर्ण कुम्भ आता है बाक़ी हर ६ साल पर अर्द्ध कुम्भ मनाया जाता है। बृहस्पति को सूर्य के चारों ओर एक चक्कर पूरा करने में १२ साल लगते हैं।

जिस वर्ष,जिस राशि पर सूर्य,चन्द्रमा और बृहस्पति का संयोग होता है, उसी वर्ष,उसी राशि के योग में,जहाँ–जहाँ अमृत बूँद गिरी थी,वहाँ–वहाँ कुम्भ पर्व होता है।

१–हरिद्वार –जब बृहस्पति कुंभ राशि में होता है और सूर्य मेष राशि में होता है,तब हरिद्वार में गंगा किनारे कुंभ मेला लगता है

२–प्रयागराज– जब बृहस्पति वृष राशि में होता है और सूर्य मकर राशि में होता है,तब प्रयागराज संगम (गंगा,यमुना,सरस्वती) में कुंभ मेला लगता है

३–नासिक – जब बृहस्पति और सूर्य का सिंह राशि में प्रवेश होता है तब कुंभ मेला नासिक में गोदावरी नदी के किनारे आयोजित होता है

४–उज्जैन – जब बृहस्पति सिंह राशि और सूर्य मेष राशि में प्रवेश करते हैं तब कुंभ मेले का आयोजन उज्जैन में क्षिप्रा नदी के तट पर होता है।

वर्तमान में बृहस्पति के वृष राशि में होने से प्रयागराज में महाकुम्भ का आयोजन हुआ है, जो १४ जनवरी से २६ फरवरी तक चलेगा। इस आयोजन में दुनिया के कोने कोने से श्रद्धालु जन आकर अमृत लाभ ले रहे हैं और अपने जीवन की आध्यात्मिक यात्रा को आगे बढ़ा रहे हैं।

■

तीर्थराज प्रयाग का माहात्म्य

*(स्कन्दपुराण, काशी खण्ड के अनुसार)

*आचार्य आदित्य मिश्र

सर्वेभ्योऽपि हि तीर्थेभ्यस्तीर्थराजो विशिष्यते।।
स्वर्गदो मोक्षदश्चैव सर्वकामफलप्रदः।
प्रयागस्तन्महत्क्षेत्रं तीर्थराज इति स्मृतः।। (२२/५८,५९)

अर्थात् सभी तीर्थों में तीर्थराज विशिष्ट है। यह प्रयाग स्वर्ग, मोक्ष एवं समस्त कामनाओं/ वांछित फलों को प्रदान करने वाला है, अतः इस महान् क्षेत्र को तीर्थराज कहा जाता है। इसे प्रयाग क्यों कहा गया? इस जिज्ञासा में कहा गया है-

यागाः सर्वे मया पूर्वं तुलया विधृता द्विज।
तच्च तीर्थवरं रम्यं कामिकं कामपूरणात्।।
दृष्ट्वा प्रकृष्टं यागेभ्यःपुष्टेभ्यो दक्षिणादिभिः।
प्रयागमिति तन्नाम कृतं हरिहरादिभिः।। (२२/६०, ६१)

अर्थात् समस्त याग (यज्ञ) तराजू के एक भाग में रखे गये और दूसरे भाग में तीर्थराज को, तो देखा गया कि सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाले तीर्थराज का पलड़ा सबसे भारी है अर्थात् श्रेष्ठ है। दक्षिणा आदि से पूर्ण परिपुष्ट यागों/ यज्ञों से भी प्रकृष्ट होने के कारण हरि, हर (विष्णु, शिव) आदि के द्वारा तीर्थराज का नाम प्रयाग रखा गया।

नाममात्रस्मृतेर्यस्य प्रयागस्य त्रिकालतः।
स्मर्तुःशरीरे नो जातु पापं वसति कुत्रचित्।।
सन्ति तीर्थान्यनेकानि पापत्राणकराणि च।
न शक्तान्यधिकं दातुं कृतैनःपरिशुद्धितः।।(२२/६२, ६३)

अर्थात् प्रयागराज ऐसा तीर्थ है, जिसके त्रिकाल में स्मरण मात्र से स्मरण करने वाले के शरीर में पाप रह नहीं सकता। पाप से रक्षा करने वाले और भी अनेक तीर्थ हैं पर वे किये हुए पापों की परिशुद्धि (परिमार्जन) के अतिरिक्त (उससे अधिक अन्य) फल देने में समर्थ नहीं हैं, परन्तु प्रयागराज भूत, भविष्यत्, वर्तमान समस्त पापों से परित्राण एवं सब कुछ देने में समर्थ है।

जन्मान्तरेष्वसंख्येषु यःकृतःपापसञ्चयः।
दुष्प्रणोद्यो हि नितरां व्रतैर्दानैस्तपोजपैः।।
स तीर्थराजगमनोद्यतस्य शुभजन्मनः।
अङ्गेषु वेपतेऽत्यन्तं द्रुमो वातहतो यथा।।

अर्थात् असंख्य जन्मान्तरों में किया हुआ जो पाप संचय है, जिसका निस्तारण व्रत, दान, तप, जप आदि के द्वारा नितांत दुष्कर है, वह पाप संचय भी तीर्थराज प्रयाग गमन हेतु उद्यत (तैयार या यत्नशील) होने मात्र से काँपने लगता है
(२२ वां अध्याय, ६४, ६५ श्लोक)

---

*गोरखनाथ मन्दिर गोरखपुर

राष्ट्रसन्त ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज

गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ जी महाराज

जीवन में धर्म की अनिवार्यता

*डॉ. अवनीन्द्र कुमार पाण्डेय

इस क्षणभंगुर सृष्टि में मनुष्य जीवन को सुन्दरतम बनाने की अभिलाषा से ऋषियों ने पुरुषार्थ चतुष्टय की संकल्पना प्रस्तुत की। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूप पुरुषार्थ चतुष्टय मानव मात्र के सर्वांगीण उन्नति की आधारशिला हैं। इनके सम्यक् परिपालन से इहलोक और परलोक उभयलोकों में सुखोपलब्धि की मान्यता है। इस चतुष्क में धर्म कनिष्ठिका स्थानीय (प्रथमस्थानीय) है। यह धर्म रूप पुरुषार्थ इतना महनीय और व्यापक है कि इसमें अखिल सृष्टि के कल्याण की कामना समाहित है। अनादि काल से आरम्भ कर समस्त क्रान्तप्रज्ञ ऋषियों ने ऐसे नियमों की स्थापना की, जो लोकमंगल और प्रकृति की रक्षा के लिए समर्पित थे। वे समस्त नियम ही धर्म के आधारभूमि बने।

वर्तमान समय में धर्म के मूल स्वरूप और उद्देश्य से वे सभी अपरिचित हैं, जिन्होंने धर्म ज्ञान के लिए शास्त्र ष्टारणागति अथवा संत शरणागति प्राप्त नहीं की है। वे सभी धर्म के विकृत स्वरूप अथवा कर्णपरम्पराश्रुत विषय को ही धर्म का मूल मान बैठे हैं। वस्तुतः धर्म का अभिप्राय धारण करना है। क्या धारण करना? तो वह सब कुछ, जिसके धारण करने से आत्महित के साथ-साथ लोकहित (लोक= संसार एवं समस्त प्राणिसमुदाय) होता है।

आचार्य मनु ने धर्म के स्वरूप को प्रतिपादित करने के लिए दस विषयों का संग्रह प्रस्तुत किया है-

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

अर्थात् धैर्यपालन, सहनशीलता, विषयों में अनासक्ति अथवा आत्मसंयम, चौर्यकर्मविरक्ति, शारीरिक और मानसिक पवित्रता, इन्द्रियसंयम, सदसद्विवेकिनी बुद्धि, विद्याप्राप्ति, सत्य का आचरण और क्रोधराहित्य - यह सब धर्म के ही विविध रूप हैं। इनमें से एक-एक का भी जीवन में अवतरण पूर्णताप्रदायक है, पुनः सबके परिपालन का तो कहना ही क्या?

कृष्ण द्वैपायन महर्षि वेदव्यास ने उपर्युक्त तथ्यों को ही अत्यन्त सरल शब्दों में उपदिष्ट किया है। महामुनि वेदव्यास जी कहते हैं कि धर्म का सर्वस्व मात्र इतना ही है कि जो आचरण स्वयं को अप्रिय हो, वह आचरण अन्यों के साथ न करें-

*सहायक आचार्य-संस्कृत, रामबचन सिंह राजकीय महिला महाविद्यालय, बगली पिजड़ा, मऊ।

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्॥

महाकवि तुलसीदास तो इस सम्पूर्ण सृष्टि में परोपकार को ही सबसे बड़ा धर्म स्वीकार करते हैं। वे कहते हैं –

परहित सरिस धरम नहीं भाई। परपीड़ा सम नहि अधमाई॥

धर्म का तात्पर्य कर्तव्य कर्म भी होता है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् कृष्ण कुन्तीपुत्र पार्थ को निरन्तर धर्म का पालन करने एवं धर्म पथ पर अग्रसर होने के लिए प्रेरित करते हैं। भगवान् कृष्ण कहते हैं –

स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।

यहाँ कृष्ण अर्जुन को अपने क्षात्रधर्म का पालन करते हुए स्वाभाविक रूप से आगत युद्धकर्म को अन्य सभी धर्मों से श्रेयस्कर प्रतिपादित करते हैं।

वस्तुतः मनुष्य अपनी नैसर्गिक वृत्तियों के कारण पशुवत् आचरण करता रहता है। वह केवल स्वरूपतः मनुष्य दृष्ट होता है। परन्तु जब उसके अन्तःकरण में धार्मिक वृत्तियों का प्रकाश होता है, तभी वह तात्त्विक रूप में मनुष्य होता है। अतएव शास्त्रों में प्रतिपादित है–

आहारनिद्राभयमैथुनञ्च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः॥

अन्तःकरण में धर्म के सात्त्विक प्रकाश से ही मनुष्य अहंकार और ममकार के अनुदात्त भाव को उत्तीर्ण कर स्व से पर के उदात्त पथ पर आरूढ़ होता है। तदुपरान्त वह न केवल प्राणिमात्र में अपितु समस्त चराचर जगत् में आत्मभाव का अनुभव करता हुआ अनवरत सदाचरण और सत्कर्म में ही निरत रहता है। वह सबकी पीड़ा को अपना मानता हुआ सबके प्रति स्नेह भाव से परिपूर्ण रहता है। ऐसा मनुष्य ही शनैः शनैः मानव से महामानव बनने के पथ पर अग्रसर हो जाता है। धर्माचरण के अभाव में मनुष्य नैकविध दोषों का आलय हो जाता है तथा परमात्मा प्रदत्त इस अतीव सुन्दर लोक को दुःखालय बना देता है। वह स्वयं भी पीड़ित होता है और अन्यों को भी पीड़ित करता है।

अतः धर्म का पालन मनुष्य मात्र के लिए सर्वविध उपकारक है। इसीलिए शास्त्र बारम्बार यह उद्घोष करते हैं कि–

धर्मो रक्षति रक्षितः, अथ च धर्मो धारयते प्रजाः।

■

भक्तकवि जयदेव कृत दशावतार-वन्दना

*एकनारायण पौडेल

वेदानुद्धरते जगन्निवहते भूगोलमुद्बिभ्रते
दैत्यान् दारयते बलिं छलयते क्षत्रक्षयं कुर्वते।
पौलस्त्यं जयते हलं कलयते कारुण्यमातन्वते
म्लेच्छान् मूर्छयते दशाकृतिकृते कृष्णाय तुभ्यं नमः॥

श्रीकृष्ण ! आपने मत्स्यरूप धारणकर प्रलय समुद्र में डूबे हुए वेदों का उद्धार किया, समुद्र-मन्थन के समय महाकूर्म बनकर पृथ्वी मण्डल को पीठपर धारण किया, महावराह के रूप में कारणार्णव में डूबी हुई पृथ्वी का उद्धार किया, नृसिंह के रूप में हिरण्यकशिपु आदि दैत्यों का विदारण किया, वामन रूप में राजा बलिको छला, परशुराम के रूप में क्षत्रियजाति का संहार किया, श्रीराम के रूप में महाबली रावण पर विजय प्राप्त की, श्रीबलराम के रूप में हल को शस्त्र रूप में धारण किया, भगवान् बुद्ध के रूप में करुणा का विस्तार किया था तथा कल्कि के रूप में म्लेच्छों को मूर्च्छित करेंगे। इस प्रकार दशावतार के रूप में प्रकट आपकी मैं वन्दना करता हूँ।

■

*शोधच्छात्र, श्री लाल बहादुर शास्त्री केन्द्रीय से.वि.
नई दिल्ली।

श्री गोरखनाथ मन्दिर के प्रकाशन

1.	गोरखदर्शन	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	150.00
2.	महन्त दिग्विजयनाथ स्मृति ग्रन्थ	डॉ. भगवती प्रसाद सिंह	80.00
3.	नाथ योग	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	10.00
4.	आदर्श योगी	रघुनाथ शुक्ल	40.00
5.	महायोगी गुरु गोरखनाथ एवं उनकी तपस्थली	रामलाल श्रीवास्तव	15.00
6.	गोरखवानी	रामलाल श्रीवास्तव	110.00
7.	गोरक्षसिद्धान्त संग्रह	रामलाल श्रीवास्तव	30.00
8.	श्री गोरक्ष वैदिक पूजा पद्धति	वेदाचार्य रामानुज त्रिपाठी	8.00
9.	अमनस्क योग	रामलाल श्रीवास्तव	15.00
10.	गोरक्ष पद्धति	रामलाल श्रीवास्तव	60.00
11.	विवेक मार्तण्ड		7.00
12.	महार्थ मंजरी		6.00
13.	गोरखचरित्र	रामलाल श्रीवास्तव	30.00
14.	हठयोग प्रदीपिका	रामलाल श्रीवास्तव	30.00
15.	सिद्धसिद्धान्तपद्धति	रामलाल श्रीवास्तव	25.00
16.	योग रहस्य	आचार्य अक्षय कुमार बनर्जी	25.00
17.	योग बीज	रामलाल श्रीवास्तव	6.00
18.	शाबर चिंतामणि	नित्यनाथ सिद्ध मत्स्येन्द्रनाथ	7.00
19.	योगी सम्प्रदाय (नित्कर्म संचय)		90.00
20.	गोरख चालीसा		2.00
21.	नाथसिद्ध चरितामृत	रामलाल श्रीवास्तव	70.00
22.	नाथ पंथ गढ़वाल के परिप्रेक्ष्य में	विष्णुदत्त कुकरेती	30.00
23.	अमरकाया महायोगी गोरखनाथ	श्रीमती माया देवी	10.00
24.	युगपुरुष महन्त दिग्विजयनाथ ने कहा था	महन्त योगी आदित्यनाथ	12.00
25.	गोरखनाथ और नाथसिद्ध	डॉ. अनुज प्रताप सिंह	130.00
26.	गोरक्षदर्शन	विजय पाल सिंह	40.00
27.	तन प्रकाश	श्री श्री 108 बाबा चुन्नीनाथ जी	20.00
28.	हठयोग स्वरूप एवं साधना	महन्त योगी आदित्यनाथ	100.00
29.	यौगिक षट्कर्म	महन्त योगी आदित्यनाथ	21.00
30.	नाथ सिद्धों का तात्त्विक विवेचन	अनुज प्रताप सिंह	70.00
31.	गोरखमहिमा	महेन्द्र नाथ गोस्वामी	30.00
32.	सुभाषित त्रिशती	रामलाल श्रीवास्तव	60.00
33.	राष्ट्रीयता के अनन्य साधक महन्त अवेद्यनाथ (3 खण्ड)	प्रो. सदानन्दप्रसाद गुप्त	1100.00
34.	राजयोग स्वरूप एवं साधना	महन्त योगी आदित्यनाथ	100.00
35.	Philosophy of Gorakhnath	A.K. Banerjee	175.00
36.	The Nath-Yogi Sampradaya and The Gorakhnath Temple		3.50
37.	An Introduction to Nath-Yoga	A.K. Banerjee	15.00
38	महन्त अवेद्यानाथ स्मृति ग्रन्थ	प्रो. सदानन्दप्रसाद गुप्त	600.00
39	योगिराज बाबा गम्भीरनाथ	महन्त योगी आदित्यनाथ	500.00
40	योग एवं महायोगी गोरखनाथ	महन्त योगी आदित्यनाथ	175.00
41	महायोगी गुरु श्रीगोरखनाथ		40.00
42	श्रीगोरखनाथ मन्दिर एवं गोरखपुर का इतिहास		40.00
43	योगिराज बाबा गम्भीरनाथ		40.00
44	युगद्रष्टा महन्त दिग्विजयनाथ		50.00
45	राष्ट्रसन्त महन्त अवेद्यनाथ		50.00

ए.पी./जी.आर-125/14 ए.पी./29075/76

सिंघाड़ा एक औषधि है

सिंघाड़ा आश्विन-कार्तिक (अक्टूबर-नवम्बर)-मास में आने वाला लोकप्रिय फल है। इसका पौधा बेल के रूप में होता है। बेल प्राय: वर्षा ऋतु में लगायी जाती है और फल जाड़े की ऋतु प्रारम्भ होने के बाद आते हैं। इसका पौधा जलीय कहलाता है।

सिंघाड़े को लोग बड़े प्रेम से कच्चा ही खाते हैं। कच्चे सिंघाड़े को ''दूधिया सिंघाड़ा'' भी कहते हैं। जब सिंघाड़े की मींगी (गिरी) कुछ कड़ी (पक्की) हो जाती है, तब इसे प्राय: उबाल कर खाते हैं। मींगी को पकने पर ही सुखाकर संग्रह किया जाता है। इन्हीं शुष्क माँगियों को कूट-पीसकर आटा बनाकर औषधि के रूप में अथवा व्रत (उपवास) आदि में सेवन करने के प्रयोग में लाया जाता है।

प्राचीन आयुर्वेदाचार्यों के अनुसार सिंघाड़ा शीतल प्रकृति वाला फल है। यह खाने में स्वादिष्ट, भारी एवं ग्राही होता है। सिंघाड़ा मलशोषक, पित्त, रक्त विकार प्रकृति वाला फल है। सिंघाड़ा मलशोषक, पित्त, रक्तविकार तथा रक्त-पित्तका शमन करने वाला होता है। यह वृष्य गुण वाला बाजी कारक, ताप निवारक, श्रम हारक, वीर्य वर्धक तथा उद्दीपक होता है। यह कुछ मात्रा में वायु और कफ की वृद्धि करने वाला होता है, अत: वात एवं कफ-प्रकोप से ग्रसित लोगों को इसका सेवन नहीं करना चाहिये। यदि करना ही पड़ जाय तो अत्यल्प मात्रा में करना चाहिये। सिंघाड़े का किसी भी रूप में नियमित सेवन 'बल्य' (बलकारक) होता है।

रासायनिक विश्लेषण करने से पता चलता है कि सिंघाड़े के १०० ग्राम खाने योग्य भाग में लगभग ३० ग्राम क्षार जल, ५.२५ ग्राम वसा, ४.५ ग्राम कार्बोहाइड्रेट्स, ३.२५ ग्राम प्रोटीन तथा समुचित मात्रा में कैल्सियम, फास्फोरस और अन्य अनेक महत्त्वपूर्ण खनिज-लवण तत्त्व विद्यमान रहते हैं। सिंघाड़े में खनिज, क्षारकी मात्रा, गाय-भैंस के दूध की तुलना में बाईस प्रतिशत अधिक होती है।

दाहका शमन करता है, अवसाद, शुक्र, प्रमेह एवं स्वप्नदोष आदि रोगों में पर्याप्त लाभ पहुँचाता है। सिंघाड़े का सेवन करने से शरीर का क्षय जल्दी ही रुक जाता है। इसके सेवन से गुदा-मार्ग से होने वाला रक्तस्त्राव भी बंद हो जाता है। पित्त-प्रकृतिवालों को सिंघाड़े के मौसम में इसका पर्याप्त सेवन अवश्य करना चाहिये। सिंघाड़े में मांसवर्द्धक गुण होता है, अत: जो दुबले-पतले और शक्ति हीन हैं; उन्हें इसका प्रयोग अवश्य करना चाहिये।

गर्भवती महिलाओं के लिये यह अच्छा खाद्य है। इसके नियमित एवं उपयुक्त मात्रा में सेवन करने से गर्भस्थ शिशु स्वस्थ तथा सुन्दर बनता है। बच्चा कुपोषण का शिकार नहीं होता। प्राचीन आयुर्वेदाचार्यों ने सिंघाड़े की प्रशंसा करते हुए यहाँ तक कह दिया है कि यदि गर्भवती स्त्री सिंघाड़े का पर्याप्त मात्रा में उचित सेवन करे तो उसका मूढ़गर्भ भी सजीव हो उठता है। इससे सिद्ध होता है कि सिंघाड़ा गर्भावस्था में अत्यधिक लाभकारी होता है।

यदि कोई महिला गर्भाशय के दौर्बल्य की शिकार हो, गर्भाशय की दुर्बलता के कारण जिसे गर्भ न ठहरता हो, बार-बार गर्भस्त्राव या गर्भपात हो जाता हो तो उसे सिंघाड़े के आटे से बने हलवे या लपसी का दूध एवं शक्कर के साथ प्रात: सायं प्रयोग अवश्य करना चाहिये।

स्त्रियों के श्वेतप्रदर और रक्तप्रदर रोगों में भी यह फल लाभकारी है। श्वेतप्रदर में स्त्री के बलाबल के अनुसार ४० ग्राम से ५० ग्राम तक सिंघाड़े का हलवे के रूप में तीन से चार सप्ताह तक सेवन करने से रोग से मुक्ति मिल जाती है। साथ ही शरीर पुष्ट होता है। रक्त प्रदर की स्थिति में हलवे की अपेक्षा इसके आटे से बनी रोटियाँ अधिक लाभ पहुँचाती हैं। इनका सेवन भी तीन-चार सप्ताह तक करना चाहिये।

मूत्र कृच्छ्रता, पेशाब की जलन, कठिनाई से पेशाब का उतरना आदि रोग होने पर सिंघाड़े का मौसम हो तो ताजे सिंघाड़े का १०० ग्राम से २०० ग्राम तक प्रयोग करे, अन्यथा सिंघाड़े के क्वाथ का प्रयोग करे।

(श्री सुरेन्द्रकुमारजी 'महाचन्द्र')

प्रकाशक :
गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर-२७३०१५
web: www.gorakhnathmandir.in | E-mail: gorakhnathmandir@yahoo.com
दूरभाष: (०५५१) २२५५४५३, २२५५४५४, फैक्स: ०५५१-२२५५४५५